२२२
कहानी

आपणी धरती : आपणा त्याग

222
कहानी

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

© यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' वीकानेर

संस्करण : १९६५

मूल्य : तीन रुपये

प्रकाशक :
सूर्य प्रकाशन मन्दिर,
बिस्सों का चोक,
वीकानेर

मुद्रक :
सत्यम् शिवम् सुन्दरम् प्रिंटर्स
बिस्सों का चोक,
वीकानेर

प्रिय मित्र
श्री कस्तूर चंद दस्साणी 'अलगा'
को सप्रेम

लेखक की अन्य रचनायें

- सावन आँखों में
- एक रास्ता और
- लाश का बयान
- ये कथा रूप (संपादित)
- सावित्री
- एक इन्सान की मौत : एक इन्सान का जन्म
- एक कमरे की कहानी
- दीया जला ! दीया बुझा !!
- प्यास के पख

२२२
कहानी

८९४६
८१२१८०

मैं इतना ही कहूँगाः—

प्रस्तुत पुस्तक मेरा कहानी संग्रह हैं। जैसी कि मेरी मान्यता रही है कि हमें विदेशी परिवेश व विचार-धाराओं का अंधानुकरण न करके भारतीय कथा चरित्र व नायकों को उनके अपने सहज-स्वाभाविक रूप मे प्रस्तुत करना चाहिए ताकि हमारे पाठक उन्हें सहजता से आत्मसात कर सकें।
आपकी सम्मति की प्रतीक्षा है।

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'
साले की होली
बीकानेर

७१.४६
४।५।७०

संकेतिका

- अच्छी दीदी ९
- सजा ११
- खट्टे-मट्ठे २८
- फिर बहार ३५
- सौदा ४६
- आत्मीय अजनबी ५६
- जिन्दगी और संस्कार ६५
- शुचिता के घेरे ७७
- दिल का दौरा ८८
- शराब और नया आदमी १००
- अपनी धरती : अपना त्याग १०७

८१८६
११५।८०

१
अच्छी दीदी

आसमान में जैसे ही काले बादल छाए, वैसे ही सुप्रिया वर्षा के आने की आशंका में छत पर टंगे कपड़ों को समेटने लगी। उसके कपड़ों को समेटने की गति बड़ी धीमी थी। वह एक एक कपड़ा उठाती थी, उसे तह करती थी और फिर उसके बारे में दो-चार बातें सोचती थी जैसे यह पैंट अच्छी नहीं है, इसका कलर भी आजकल अप्रचलित हो चला है आदि।

और कपड़ों को उठाती-उठाती वह कपड़ों के धनी असीम के बारे में सोचने लगी। वह आजकल दुबला हो गया है। पलकों के साए में पूरी-पूरी सी उदासी तैरा करती है। हां, वह २५ वर्ष के ब्रह्मचर्य की अवधि भी समाप्त कर चुका है। कुछ माह में वह एम. ए. भी···।

अब बूंदें बरसने लगी थीं। बूंदों के साथ पवन का ठंडा झोंका सुप्रिया के बालों को उड़ाने लगा। कहीं-कहीं एकाध श्वेत बाल भी निकल आये थे। उन बालों को देखकर वह अमर्ष और क्षोभ से तड़प उठती थी तब उसका मन घर के काम-काजों में नहीं लगता था।

वर्षा ने जोर पकड़ा। अन्तर्द्वन्द्व में खोई सुप्रिया चौंक पड़ी। जल्दी-जल्दी कपड़ों को इकट्ठा करके नीचे चली आई।

वह कमरे में आ गयी। कुछ बूंदें अब भी उसके नंगे हाथों पर चमक रही थीं। उड़ती हुई उदास लटें उसके पीले हुए कपोल पर उड़-उड़ सी रही थीं।

"दीदी !"

"क्या है !" उसने घूमकर देखा। असीम आंखों में वही घुटी घुटी-सी उदासी लिये खड़ा था। अरे इसका बटन भी टूट गया है। उसकी इच्छा हुई कि वह इसे तुरन्त कहे, 'खोल बुशशर्ट, पहले मैं इसका बटन लगाऊंगी।" पर उसने उसके मौन का अभिप्राय भी दूसरे क्षण जान लिया। बोली, "रुपयों की आवश्यकता है ?"

"हां, दीदी !"

"क्या, करेगा ?"

"जरूरत है।" सदा की तरह सुप्रिया यही सुनती आई है। केवल इतना ही 'जरूरत है" और इसके साथ उसके मन पर करुणा का सागर लहरा उठता था। एक ऐसी असह्य वेदना जिसे सुप्रिया सहन नहीं कर पाती थी और वह चुपचाप रुपये उसे निकाल कर दे देती थी।

वह कमरे के किवाड़ों, खूंटियों व बरामदे की दीवारों पर कपड़े सुखाती रही। उसने असीम की ओर देखा तक नहीं। ईर्ष्या की हल्की रेखा उसके मन में जागी और उसने उसे टालने के लिहाज से कहा, "देखती हूँ, रुपये हैं या नहीं, तुम्हें कितने रुपये चाहिए ?"

"दस" कह कर असीम बाहर चला गया।

सुप्रिया सोचती रही– वह रुपयों को लेकर जाएगा, सुजात को सिनेमा दिखाएगा। ओह ! बेचारी बहुत गरीब घराने की है। शाम तक वह खाली जेब वापस आ जाएगा। उसके पूरे दो दिन की कमाई एक क्षण में उड़ जायगी। वह आज असीम को रुपये नहीं देगी। उसने मन ही मन निर्णय किया। वह अजानी ईर्ष्या में जल उठी।

बाहर वर्षा पहले की तरह थी। हवा के झोंकों के कारण वर्षा की बूंदे बल खाने लगती थीं।

वह कपड़े सुखाकर पलंग पर बैठ गई। उसे लगा कि वह बहुत

थक गयी है। इतनी थक गयी है कि जितना एक यात्री निरन्तर हजारों मील की यात्रा करके थक चुका हो। उसने क्षण भर के लिए अपने नयन बन्द कर लिये।

एक घटना उसके मस्तिष्क में साकार हो उठी।

तब वह कॉलेज में पढ़ती थी। वह पूर्ण जवान थी। यौवन के कारण उसका श्याम वर्ण अत्यन्त आकर्षक लगता था। उसमें अद्भुत कोमलता और स्निग्धता थी। तब नवेन्दु उसके जीवन में आया था। उसकी श्यामलता पर वह मुग्ध हो उठा था। [redacted] एक दफ्तर में क्लर्क था। किन्तु था अत्यन्त भावुक प्रकृति का। जब कभी भी वह मिलता था, सुप्रिया को यही कहता था कि वह उसके बिना कुछ भी नहीं है। जीवन-मरण तक साथ रहेगा हमारा।

मधुर कल्पना ने सुप्रिया को सिहरा दिया। सुखद क्षण उसके मनोवेगों में स्फूर्ति और आनन्द भर गये।

पलंग पर वह प्रसन्नता की अतिरेक से उछल पड़ी जैसे वह कोई नवयौवना हो और प्यार के मदिर स्पर्श से रोमांचित हो उठी हो और उसे ख्याल भी न रहा हो कि वह एक नन्हीं बालिका सी हरकत कर रही है? वह पलंग पर पुनः लेट गई। उसने आँखें अब भी बन्द कर रखी थीं जैसे वह आँखें खोलकर वापस इस व्यथामय संसार में नहीं आना चाहती।

असीम ने एक बार कमरे में प्रवेश किया और उसे सोई हो जानकर वापस चला गया। फिर कुछ सोचकर वह पुनः आया और बोला, "दीदी, दीदी, मुझे देर हो जायगी।"

सुप्रिया हड़बड़ाकर बैठ गई। उसका मधुर सपना टूट गया। क्या, असीम उसे खड़ा-खड़ा देख रहा था? यह सकोच में गड़ गयी पर दूसरे ही क्षण वह घृणा से भर उठी— "क्या वह मुझे एक पल कल्पना के

सुख को भी ग्रहण नहीं करने देगा ? आदमी कितना स्वार्थी है ? नहीं है मेरे पास एक भी पैसा ?" वह मन ही मन रुष्ट सी कह उठी।

"दीदी, मुझे क्षमा करना। तुम सो गई थीं, तुम्हें जगाया इसके लिए मुझे क्षमा करना।" उसकी आंखों में प्रभावशाली निगूढ़ व्यथा चमक उठी। उस चमक को वह नहीं सह सकती। वह उठी और उसे पेटी में से दस का नोट देकर बोली, "मैं जानती हूँ असीम, तुम्हें रुपये की सख्त जरूरत रहती है पर मुझे पांच रुपये वापस ला देना। तुम्हें मालूम ही है कि मेरा एक ट्यूशन छूट गया है।"

असीम चला गया।

सुप्रिया ने जाते ही पलंग के नीचे से एक पत्र निकाला। सुजाता ने असीम को लिखा था–

मेरे असीम, हम-तुम दोनों एक ही शाखा के दो पंछी हैं। कुछ भी हो, मैं तुम्हारा जीवन भर साथ नहीं छोड़ूंगी। मैं तुम्हारी आर्थिक स्थिति से परिचित हूँ, अतः तुम्हें मेरे निमन्त्रण पर एक अहंकारी की तरह नहीं सोचना चाहिए। मैं चाहती हूँ कि आज हम-तुम दोनों सिनेमा देखें। क्या करूं, मेरा देवदास एक जमींदार का बेटा नहीं है। अतः मेरा यह निमन्त्रण तुम साधारण रूप में ही मान कर आजाना अन्यथा मत समझना मेरे देवदास याने तुम !

—सुजाता

'देवदास' के शब्द ने सुप्रिया के मन में नई प्रतिक्रियाओं को जन्म दिया। मां-बाप की मृत्यु के उपरान्त अपने छोटे भाई के पालन-पोषण की सारी जिम्मेदारी सुप्रिया पर आ गयी थी। उसे कॉलेज छोड़कर एक स्कूल में [illegible] ना पड़ा।··· तब उसका भी देवदास उसे ऐसे ही पत्र लिखता

[illegible] न चहलपहल में उसका नवेन्दु खो गया।··· उसे अच्छी [illegible] वह असीम के भविष्य में खो गई। रात-दिन श्रम करती

थी । वह चाहती थी— अनाथ असीम को न माँ की ममता खले और न बाप के कर्तव्य का अभाव महसूस हो ।

आज जब वह विश्लेषण करती है तब उसे लगता है वस्तुतः जहाँ एक भावना का एकाधिपत्य हो जाता है, वहाँ आदमी जीवन के सारे पहलुओं के बारे में नहीं सोच सकता । यही हाल सुप्रिया का हुआ । वह रात-दिन हिस्टीरिया के रोगी की तरह असीम के लिए रुपये एकत्रित करने लगी । स्कूल से दूसरी नाइट स्कूल । और सवेरे उठते ही ट्यूशन्स । और इस व्यस्तता में नवेन्दु उससे दूर-दूरतर होता गया ।

उसका क्रमशः अलगाव का एक-एक पल आज भी सुप्रिया के पास है । उसे लगता है कि वह मूर्ख है । आज के घोर एकान्त और नीरसता की जिम्मेदार वह स्वयं है । न वह असीम के लिए आवश्यकता से अधिक व्यग्र-चिन्तित होती और न वह नवेन्दु को अपने जीवन से दूर होने देती ? और हाँ, उसने असीम को एक धनवान के बेटे की तरह पाला और यही कारण है कि आज उसके पास इतनी पूँजी भी नहीं है जो इस उम्र में भी उसके लिए किसी के मन में आकर्षण उत्पन्न कर सके । तो क्या उसकी बरबादी का कारण उसका अपना भाई असीम है ? घृणा से भरा प्रश्न उसके मन में आया, जिसने उसकी तमाम भावनाओं को झकझोर दिया । और सहसा उसकी आत्मा पर धिक्कारने के बादल मँडरा उठे और उसे महसूस हुआ कि उसने ऐसा सोचकर भी पाप किया है । उसे अपने बच्चे के बारे में इस तरह घृणा व जलन नहीं रखनी चाहिए । क्या एक सच्ची माँ ऐसा पतित विचार अपने मन में ला सकती है ?··· उसे प्रतीत हुआ कि उसने कोई अपराध कर दिया है ।

छह वर्ष के असीम को उसने अपनी गोद में लिया था, जब माँ अन्तिम साँस रोक कर पड़ी थी । तब वह अठारह वर्ष की थी । बारह वर्ष के बाद उसके एक भाई हुआ था । उसकी आशाओं की सीमा को तोड़कर । माँ उसे प्यार से कभी-कभी दीपक भी कहती थी ।··· उस असीम के लिए

उसके मन में ऐसी जलन और घुटन क्यों ? दाह और घृणा क्यों ? क्या वह उससे बदला लेना चाहती है ? बदला ! बदला !! बदला !!!

वह विचलित हो उठी। भागकर बाहर गई। उसने देखा—असीम अपने कमरे में मेज पर पांव रखकर बैठा है। उसके चेहरे पर अथाह वेदना है। आंखों में वही घुटी-घुटी तड़प है, जिसे वह सहन नहीं कर सकती। वह शीघ्रता से उसके पास आई और बोली, "तुम अभी तक नहीं गये असीम ?"

"मैं नहीं जाऊंगा दीदी ?"

"क्यों ?"

"पांच रुपयों में काम नहीं चल सकता !"

"फिर दस ही ले जाते ?"

"नहीं-नहीं ? तुम्हें रुपयों की आवश्यकता है, इसलिए मैंने सोचा कि आज एक पैसा भी खर्च न किया जाय।"

"नहीं-नहीं।" वह कांप उठी, "जाओ, मुझे पैसों की कुछ भी जरूरत नहीं है। पता नहीं, मैंने ऐसा क्यों कह दिया ? तुम्हें मेरे कहने को इतना गम्भीरतापूर्वक नहीं लेना चाहिए। जा, जल्दी से चला जा, किसी को समय देकर न जाना अच्छा नहीं रहता।" कहते कहते सुप्रिया विह्वल हो उठी।

"मेरी अच्छी दीदी" कह कर वह अपनी दीदी से लिपट गया। फिर उसकी गोद में नन्हें बच्चे की तरह सिर रखकर बोला, "तुम मुझसे नाराज हो जाती हो न अच्छी दीदी, तो मैं अपने आपको असहाय पाता हूं। चाहता हूं— यहां से कहीं दूर, बहुत दूर भाग जाऊं ताकि मेरी अच्छी दीदी मुझसे नाराज न हो। मैं चाहता हूं कि तुम खुश रहो..." वह विह्वल हो गया। उसका गला भर आया।

"मैं तुमसे बहुत खुश हूँ असीम ?" सुप्रिया की आँखें भर आयीं, "कल मैं तुम्हारे लिए सौ रुपये के कपड़े बनाऊँगी। ये सब कपड़े आउट आफ डेट हो गये हैं।"

"मेरी अच्छी दीदी, तुम इसी तरह खुश रहा करो।" कह कर वह जल्दी से भाग गया।

"कैसे खुश रहूँ ?" उसके जाते ही उसने सोचा, "तुम कभी भी यह सोचते हो कि तुम्हारी अच्छी दीदी इस जीवन में अकेली है। कल तुम्हारी बहू आ जायगी। तुम्हारे बच्चे हो जायेंगे। तुम मुझे छोड़कर उसमें तल्लीन हो जाओगे। मैं अकेली रह जाऊँगी···अकेली—तब मेरे त्याग का क्या—··· ?' सहसा सुप्रिया ने अपने विचारों को रोक लिया। वह जोर से कह उठी, "मुझे अपनी तरह उसे वीरान नहीं करना है। नहीं करना।"

और अच्छी दीदी ने तड़पकर अपने गालों पर अपने हाथों से दो-चार चांटे मार लिये।

घर में सन्नाटा छा गया।

सज़ा

●

आकाश ऐसे साफ था जैसे कोई नीला सीमेंट का बना हुआ फर्श हो। न कोई पक्षी और न कोई बादल का टुकड़ा। साफ, बिलकुल साफ। लाल ने खिड़की की राह अपनी दृष्टि को दौड़ाया। सूरज की आग बरसाती हजारों बाँहें धरती को अपने में दबोचने की भरपूर चेष्टा कर रही थीं। कोलाहलपूर्ण सड़कों पर रेंगते हुए कीड़ों-मकोड़ों की तरह इन्सान लाला की खिड़की से स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे। दूरागत अप्रिय आवाजें कभी-कभी लाला की बात चीत में व्यवधान उत्पन्न कर जाती थीं।

उसने पलक झपकते अपनी दृष्टि को वापस समेटा। होंठों के कोरों को एक विचित्र तरह से हिलाकर, जो प्रायः घृणा की अति में ही हिलाये जाते थे, वह बोला, "पन्नू! मेरा कहना मान जाओ। तुम्हें सुख और सहूलियत दोनों मिलेगी। तुम यह भी अच्छी तरह से जानते हो कि मैं टेढ़ी अंगुली से ही नहीं, सीधी अंगुली से भी घी निकालना जानता हूं।" उसके स्वर में आदेश के साथ-साथ ताड़ना थी जो दूसरे ही क्षण एकदम बदल गयी। लाला मित्रता के भाव मे बोला, "तुम्हारा भला इसी में है कि तुम मेरा कहना मान लो। पूरे पांच सौ रुपये दूंगा और तुम्हारी तरक्की अलग से होगी।"

पन्नू ने असमर्थता प्रकट कर दी। उसने पल भर के लिए लाला के रंग बदलते चेहरे को देखा। फिर अपनी दृष्टि लाला के तेजी से हिलते पांव के अंगूठे पर जमाकर वह बोला, "आपका नजरिया अपना है। अपने

निजी लाभ और सुख का है। पर मैं ऐसा नहीं कर सकता हूँ। मैं अपने कारखाने की यूनियन का मन्त्री हूँ। सो मजदूरों की जिन्दगी का सवाल है। आखिर आप जो हम सबका उचित हक है, उसे दे क्यों नहीं देते ?"

लाला बिलकुल व्यग्र होकर तमतमा उठा। क्रोध में उसकी आँखों में आग की चिनगारी जल उठी और वह बोला, "तत् तत्! तुम समझते क्यों नहीं! मैं तुम्हें अपना बना रहा हूँ।"

"आप आज अकेले मुझे अपना बनाकर उन सैंकड़ों से अलग कर रहे हैं, जो सदा से मेरे रहे हैं। लाला जी! आपको बोनस देना ही पड़ेगा, आपको दवाओं का खर्चा देना ही पड़ेगा वर्ना यह हड़ताल होकर ही रहेगी।"

"यह तुम्हारा अन्तिम फैसला है?" लाला ने एक बार फिर पूछा।

"हाँ।"

"तुम जा सकते हो। पर इतना याद रखो कि इसका नतीजा अच्छा नहीं होगा। इससे उन कामचोरों के साथ तुम्हें भी बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा।"

जाते-जाते वापस लौटकर पन्नू ने कहा, "लाला जी, यदि हम कामचोर होते तो आपको लाखों का लाभ नहीं होता।"

उसके जाते ही लाला बनवारी की आँखों में हिंस्र भावना जल उठी। प्रायः यह भावना उसकी आँखों में किसी कार्य की असफलता पर चमका करती थी। लाला ने सिगरेट निकाली। उसको जलाया और पीने लगा। गोलाकार धुँआ कमरे की छत से टकराने लगा। लाला बड़ी देर तक गम्भीरता से सोचता रहा। उसका मुनीम आया था पर सेठ जी की कठोर मुद्रा को देखकर वह चकित हो उठा और चुपचाप वापस चला गया। सिगरेट ने एकाएक लालाजी की उंगलियों को जलादा। लाला

चौंक पड़ा। सिगरेट को बुझाकर उसने मन-ही-मन यह इरादा किया, "मैं पन्नू तुम्हें भी इसी सिगरेट की तरह एक पल में बुझा दूंगा।" फिर वही आवेशजनित—तत्-तत् !

लाला ने फोन उठाया। उस पर थोड़ी-सी बातचीत की और भारी मन लिये अर्धशायित हो गया। धीरे-धीरे उनकी आकृति पर बैठी हुई निर्दयता व कठोरता कम हो गयी। मुनीम का साहस बंधा।

"लाला जी !" मुनीम ने सिर झुका कर प्रणाम किया।

"क्या ?"

"सरकार का एक नया आर्डर मिला है।"

"उस आर्डर को आग में झोंक दो। समझे ! और सुनो, अब तुम जा सकते हो।" कहकर लाला बाहर चला गया। मुनीम ने कार के चलने की आवाज सुनी।

रात को आठ बजे वह वापिस लौटा।

सारा आकाश जो दिन भर आग बरसा रहा था, अब चांदनी से भर गया, शीतल चांदनी से। सन्नाटा सड़कों पर तो नहीं, लाला के मन पर पूरी तरह छाया हुआ था। उसने सिगरेट जला ली और पीता रहा। कुछ स्मृतियां उसकी आंखों में तैर उठी। अतीत की स्मृतियां।

विभाजन के पहले लाला बनवारी एक छटा हुआ इन्सान था। चोर, उचक्कों, उठाईगिरों और बदमाशों से चोरी का माल लेता और उन्हें इधर-उधर बेचने का धन्धा करता था। दो-चार उसने खास बदमाशों को अपने साथ मिला रखा था। जिससे समय-असमय धांधलेबाजी भी करा लेता था। वैसे उसने समाज और सरकार से बचने के लिए एक कबाड़ी की छोटी-सी दूकान भी खोल रखी थी। वह लाहौर के व्यस्त [illegible]र व्यापक जीवन में अस्तित्वहीन-सा था। किन्तु विभाजन के समय हुए

दंगों में उसके हाथ खूब माल लगा और यहाँ आकर उसने क्लेम भी दो लाख रुपये का किया। कुछ अफसरों को खिला-पिलाकर रुपया भी ले लिया। फलस्वरूप आज वह एक मेटल वर्क्स का मालिक बना हुआ था। उसका अपना प्लास्टिक का कारखाना भी था जिसकी देख-रेख उसका इक-लौता बेटा गिरधारी करता था। वह कनाट प्लेस में खिलौने की एक बढ़िया दूकान शीघ्र ही खोलने जा रहा था। वही बदमाश बनवारी आज नगर का प्रतिष्ठित नागरिक बन गया। लाखों का मालिक और लोकप्रिय।

सिगरेट खत्म हो गई थी। उसने नयी जलायी। जोर का कश खींचकर वह मुस्कराया। नौकर ने आकर पूछा, "आज आप घर नहीं जायेंगे ?"

"जाऊँगा, पर जरा ठहर कर।"

"कब ?"

"कह दिया कि ठहर कर।" शेर की तरह गरजा लाला। बेचारा नौकर भीगी बिल्ली की तरह भागा। उसने अपने पिछले विचारों को व्यव-स्थित किया और वह इस तरह बोला जैसे अपने आपसे कह रहा हो, "इन्सान भी अजब है। बहुत ही अजीब और अबूझ। वह एकदम बदल जाता है, ठीक गिरगिट की तरह। एक जमाना था कि मैं बहुत बुराइयों का घर था, ऊँचे लोग मुझसे बातें करने से कतराते थे, शरीफ लोग मुझसे आँख भी नहीं मिलाते थे पर आज······आज वे बाँहें पसारकर मुझे गले लगाते थे। आज मेरे एक होनहार और चरित्रवान लड़का है। फूल–सी लजीली और कुलता-रिणी बेटे की बहू सरला !······सरला ! इस नाम के उच्चारण मात्र से ही लाला की अधमुँदी आँखें एकदम खुल पड़ीं। उनमें दुष्टता नाची। एक क्रूरता भरा स्फुलिंग ! इसके साथ उसके होंठों पर एक अर्थभरी लघु मुस्कान थिरक उठी, "लाला गणपतिचन्द्र सोने वाले की बेटी ! एक जमाना था जब गणपतिचन्द्र अपनी मोटर में बैठ कर उड़ता था। और मैं प्यासी–प्यासी आँखों से देखता था। मेरे मन में उस जैसा बनने के अनेक सपने तैर जाते

थे। पर भाग्य की बात ! देश के बटवारे ने उन्हें कंगाल कर दिया और मुझे मालामाल। अपनी बेटी को गिरधारी से ब्याहने के लिए उन्होंने कितने हाथ जोड़े थे। मुझे कितनी बार शरीफ, खानदानी और दयालु कहा था। लाला की आंखें बड़ी हो गयीं। इस बार उनमें अहंकार ठाठें मार रहा था "आज वे भी मेरी मोटर को उन्हीं प्यासी आंखों से देखते हैं जैसे एक जमाने मे मैं उनकी मोटर को देखा करता था। लाला एकदम उठा। उसने एक बार अपने चारों ओर पड़े विपुल विलास को देखा। एक उन्माद-सा उसके चेहरे पर नाचा।

मैं बहुत सुखी हूं। मुझे सब कुछ प्राप्त है।

एक हथोड़ा—सा उसके सीने पर पड़ा और उसके कल्पनालोक में दुबले-पतले युवक पन्नू का चेहरा घूम गया। पन्नू की तेजस्वी आंखें उसके कलेजे में छिपे कालेपन को जैसे देख रही हो, कुछ-कुछ ऐसा ही आभास हुआ लाला को। और लाला अपनी कमीज की बटनों को ठीक करने लगा।

घड़ी ने नौ बजाये।

लाला बड़बड़ाया, "अभी एक घंटा शेष है।"

उसने नौकर को आवाज दी—"सुनो किरसन, कोई आदमी आए तो ऊपर भेज देना। इस लाइट को बुझा दो।"

कमरे में घोर अंधेरा हो गया।

सिर्फ जलती सिगरेट उसके अस्तित्व को बता रही थी।

"यह पन्नू सचमुच मेरे शांत और सुखी जीवन में भूचाल लाने के लिए आ गया है। हरदम मजदूरों के अधिकारों की बात करता है। हरदम बोनस और मांगों के नारे लगाता है। संगठन और संघर्ष की बातें करता है। हड़ताल की धमकियां देता है। दो वर्ष पहले भी इसने हड़ताल कराके मुझ से बीस हजार रुपये ले लिये थे। आज फिर वह मुझसे मजदूरों के हक में फैसला चाहता है। एक माह के भीतर मांगों को पूरा करने का आदेश देता

है; अन्यथा हड़ताल, हड़ताल, हड़ताल !" और यह हड़ताल शब्द लाला के मस्तिष्क में घाटियों की प्रतिध्वनियों की तरह गूंज गया।

लाला के अंग-प्रत्यंग में शिथिलता आ गयी। कुछ क्षण उसे अपने को स्वस्थ करने में लगे। वह उठ गया। अंधेरे में चहलकदमी करने लगा। करते-करते उसने सिगरेट को बुझा दिया और ज़ोर से कदम पटक कर कहा, "मैं उसे रास्ते से सदा-सदा के लिए हटा दूंगा।" यह वाक्य उसके न चाहते हुए भी उसके होंठों की सीमा का उल्लंघन कर गया। वह सम्भल गया। अपने आवेश को रोक कर वह बिस्तर पर पड़ गया, "आज मेरा वह पुराना ज़माना होता तो मैं इस मजदूर नेता का भेजा एक दिन में ठीक कर देता। यह शराफत भी आदमी को बड़ा कमज़ोर बना देती है।"... "...हाथ-पांव बांध देती है।

वह परेशान सा कमरे में चहलकदमी करता रहा।

थोड़ी देर में एक काला सा आदमी उसके समक्ष हाज़िर हुआ। कमरे में हरी बत्ती का उजाला फैल गया। उसके सिर पर एक-एक इंची बाल थे और मूंछें राठौड़ी थीं। कद ठिगना था और शरीर गठा हुआ-तगड़ा। उसने आते ही लाला को नमस्कार किया, "क्या बात है बनवारी ?"

"सूरज, तुम्हें मेरा एक काम करना है।"

"तू दो काम बताना, तेरा काम चुटकी बजाते करूंगा। तू मेरा पुराना यार है न !"

लाला को सूरज का 'तू यारा' अच्छा नहीं लग रहा था। अब उसे सम्मानसूचक सम्बोधनों के सुनने का अभ्यास हो गया था। तू और हम उसके लिए अशिष्टता के प्रतीक बन गये थे। लेकिन सूरज को वह कुछ भी कह नहीं पाया। वह उसका लाहौर का साथी था। साथ उठने-बैठने वाला था—किसी ज़माने में। पहली बार जब उसकी भेंट हुई तब सूरज ने अप-नापन बताना शुरू किया था। बनवारी को बहुत बुरा लगा था। वह

पुराने जीवन पर पड़े पर्दे को नहीं उघारना चाहता था पर सूरज शराब के नशे में बके ही जा रहा था कि वे दोनों किस तरह शराब पीते थे, किस तरह चोरियां कराते थे और किस तरह भले आदमियों को सताते थे। अंत में बनवारी ने उसे पचास रुपये देकर अपनी जान छुड़ाई थी। उसका पता नोट कर लिया था। कभी न कभी काम आयेगा ही। और आज उसने उसे खुद बुलाया। शराब गिलास में डालते हुए लाला बोला, 'एक आदमी को ठिकाने लगाना है चाहे उसके लिए हजार रुपये भी खर्च हो जायं।"

"तू खुद क्यों नहीं लगा देता!" सूरज ने शराब का गिलास खाली करते हुए कहा, "तेरी चोट भी खाली नही जाती है।"

"अब मैं यह सब नहीं कर सकता।" उसने अपने शब्दों पर जोर देकर कहा।

सूरज एक कुटिल हँसी हँस पड़ा, "क्यों? इसलिए कि तू एक शरीफ आदमी बन गया है? इज्जतदार हो गया है?"

"हाँ, भाई हाँ। अब मुझसे गुण्डागिरी नहीं हो सकती। न जाने क्यों एक भय-सा लगता है।"

सूरज ने अपना गिलास शराब से भर लिया। घूंट लेते हुए बोला, 'जो तू मुझे कह रहा है, क्या वह शराफत का काम है? वह क्या गुण्डागिरी नहीं है?'...

'अरे तुम समझते क्यों नहीं?" उसने उसे समझाने की चेष्टा की, समय-समय की बात होती है। आज मैं शरीफ हूँ। शराफत आदमी को बांध देती है। वह चाह कर भी कुछ नहीं करता। वह लाचार और कमजोर हो जाता है।"

'खैर, मैं तो तेरा यार हूँ और तेरी तरह शरीफ भी नहीं बना हूँ, इसलिए तेरा काम करूँगा ही। बता वह कौन है?"

"पन्नू ! मेरे कारखाने की यूनियन का लीडर है। साला दिनभर मजदूरों को भड़काता रहता है। मुझे तंग करता है। सूरज ! तुम्हें मेरी पुरानी दोस्ती की कसम है, उसे तुम्हें ठिकाने लगाना ही है। और चाहे कुछ भी हो जाए पर यह भेद नहीं खुलना चाहिए। समझे !"

"अच्छा, अच्छा।" उसने लापरवाही से कहा।

"और हाँ, एक बात का ख्याल रहे।"

"क्या ?"

"हाथ में दस्ताने जरूर हों। तुम गुण्डे लोग अक्सर भागते समय अपनी चीजें छोड़ जाते हो जिनसे पुलिस तुम लोगों को पकड़ने के तुरन्त रास्ते बना लेती है।"

"मैं कोई भी चिह्न नहीं छोड़ूँगा। तू चिन्ता न कर।"

"और हाँ, शराब भी ज्यादा मत पीना। अधिक शराब भी काम गड़बड़ कर देती है।"

"तू मुझे इस तरह उपदेश दे रहा है जैसे मैं कोई नया खिलाड़ी हूँ। सब ठीक हो जायेगा। और हाँ, वह रहता कहाँ है ?"

"गली......मकान नम्बर २६५।"

"बहुत अच्छे। उस गली के चौराहे पर अंधेरा रहता है।"

"और पन्नू रात को लगभग साढ़े बारह बजे कारखाने से वापस आता है। मैंने इसलिए उसकी रात की ड्यूटी लगा रखी है। उसका खास चिह्न यह है कि उसके हाथ में टार्च रहती है और वह गीत गुनगुनाता रहता है। हाँ, तुम काम कब करोगे ?"

"कल ही ! ऐसे कामों में देर किस बात की ?"

"पक्का वायदा करते हो ?"

"एकदम ।"

वह कुछ रुपये लेकर चला गया । लाला ने पुनः कमरे में अंधेरा कर लिया । सिगरेट अब भी उसका अस्तित्व बना रही थी । उसके आग में लाला जल्लाद-सा लग रहा था ।

× × ×

लाला बनवारी के एक बेटा था जो दूसरे मकान में रहता था । यहाँ केवल गद्दी थी जो दिन में देशी दफ्तरों की तरह प्रयोग में लायी जाती थी । यहाँ बनवारी रात को एक बजे तक रहता था । दूसरे दिन सुबह ही सूरज आया और पाँच सौ रुपये लेकर चला गया ।

तीसरे दिन बनवारी सूरज की प्रतीक्षा में रात भर जागता रहा । सूरज सुबह-सुबह ही शराब के नशे में धुत होकर आया और बोला, "मैंने अपना काम पूरा कर दिया है टार्च और गीत गाने का चिह्न नहीं भूला हूँ । मुझे पांच सौ रुपये और दो । वह छुरी, टार्च और दास्ताने मैंने जमुना में बहा दिये हैं । अब तुझे-मुझे कोई भी खतरा नहीं है ।

बनवारी ने तीन सौ रुपये देकर कहा, 'यह लो पाँच सौ रुपये । आज तुमने अपनी दोस्ती का हक अदा कर दिया ।"

सूरज ने रुपये गिने । तीन सौ रुपये थे पर नशे के कारण उसे वे पाँच सौ ही लगे । बनवारी अपनी इस चतुराई पर बड़ा गर्वित हुआ । जब वह चला गया तब वह मौन अट्टहास कर उठा, "साला पन्नू हड़ताल करायेगा । देखूँगा, अब कैसे हड़ताल करता है ?"

और वह वहीं पर बैठा रहा।

बनवारी इस प्रतीक्षा, इस आशा की प्रतीक्षा में आतुर था कि कोई अभी यह खुशखबरी लेकर आयेगा कि पन्नू को किसी ने मार दिया है, किन्तु बड़ी देर तक जब उसे कोई खबर नहीं मिली तब वह विचलित हो गया और अपने कमरे में टहलने लगा। उसकी जिज्ञासा क्षण-प्रतिक्षण तीव्र हो गयी और अन्त में वह स्वयं कपड़े पहन कर घटनास्थल की ओर चल पड़ा।

चौराहे पर पुलिस का पहरा था।

खून के कतरे सूर्य की धूप में अब भी चमक रहे थे।

उसने वहीं पर खड़े एक व्यक्ति से पूछा, "कौन था वह ?"

उस व्यक्ति ने पीड़ा से कराह कर कहा, "उसके मुंह पर तीन घाव थे इसलिए पहचाना नहीं गया। मारने वाला बड़ा ही राक्षस था, बुरी तरह से मारा है बेचारे को। उसकी जेबें भी एकदम खाली थीं, ताकि पुलिस उसका कोई पता भी नहीं लगा सके कि वह बेचारा कौन था ? कैसा जमाना आ गया है लाला जी, इन्सान हैवान हो गया है।'

"राम-राम !" बनवारी बड़बड़ाया और उसके कदम स्वतः ही पन्नू के मकान की ओर उठ गये। एकाएक वह रुका। उसे किस तरह दुख का नाटक करना चाहिए। आंसू बहाने चाहिए या नहीं। वह कई क्षण तक सोचता रहा।

अप्रत्याशित उसकी निगाह पन्नू पर पड़ी। लाला पत्थर का हो गया। पन्नू तेजी से उसकी ओर आ रहा था। आते ही उसने बनवारी को सलाम किया और व्यग्रता से पूछा, "किसकी हत्या हो गयी है लाला जी ? और आप यहां कैसे आये हैं ?"

'"मैं तुझे खोजने आया था। पता नहीं, मेरा दिल क्यों बैठने लगा ?' उसने अपनी व्यग्रता को छुपा कर बड़ी कठिनता से कहा, "तुम रात भर कहां थे ?"

"कोतवाली !"

"क्यों ?"

"एक दूकानवाला एक गरीब बुढ़िया को कुचल गया था। मैं उसका चश्मदीद गवाह था। कैसे लोग हैं लाला जी कि इन्सान को कीड़ों-मकोड़ों की तरह कुचल देते हैं।"

"खैर, अच्छा हुआ, तुम राजी-खुशी हो।" वह कह कर चुप हो गया। वह बड़ा व्यग्र और चिन्तित था। उसके मन में रह-रहकर यही प्रश्न उठता था कि फिर सूरज ने किसको मारा है? किसकी हत्या कर दी? मन में घोर आन्दोलन !··· और वह गाड़ी में बैठ गया।

टैक्सी ऐसे रुकी जैसे वह लाला को ढूँढ रही हो। उसमें से लाला का नौकर किसन उतरा। लाला स्तब्ध। नौकर ने रोते हुए बताया, "लाला जी, हम लुट गये, बरबाद हो गये; सत्यानाश हो गया हमारा।"

"बात क्या है ?" लाला एकदम घबरा उठा।

"छोटे बाबू को······।"

"क्या हुआ छोटे बाबू को।" वह एकदम चिंघाड़ा।

"इस चौराहे पर जिस युवक की हत्या हुई, वह हमारे छोटे बाबू ही थे। मैं उन्हें अस्पताल देख कर······।"

'खामोश !' पागल की तरह बनवारी बोला। उसने अपने नौकर का गला पकड़ लिया और वह टैक्सी पर जा बैठा।

अस्पताल ! तेज और तेज।

अस्पताल में बनवारी ने उस विकृत लाश को पहचान लिया। वह लाश उसके बेटे की ही थी। बाहर खड़ी एक युवती अपनी सहेली से दर्दभरे स्वर में कह रही थी, "सुधा ! मेरा प्यार लुट गया। वह मुझे बहुत चाहते थे। शादी का भी वचन दिया था। यदि मैं जानती कि ऐसा होगा तो इन्हे जाने ही नहीं देती। उफ ! कल बातों ही बातों में समय का ध्यान ही नहीं

रहा । सच, मैं जीते जी मर गयी । और वह सुबक पड़ी । उसकी आँखों में आँसू थे ।

और बनवारी पत्थर का हो गया ।

करुणी उसे देखती रही । सोचती रही—लड़का कितना भोला है ? इसके दांत कितने सफेद हैं ? आंखें कितनी बड़ी हैं ? और करुणी की आंखों में ममता का सैलाब सा उमड़ पड़ा । सहसा उसके मन में विचार आया कि वह उसे क्यों नहीं अपने संग ले जाती ? उसने तुरन्त पूछा, "तेरे साथ कौन कौन है ?"

लड़के ने कुछ नाराज होते हुए कहा, "कह दिया ना, मैं कुछ नहीं जानता, मेरा कोई नहीं है ।"

करुणी के मुख पर खुशियां तैर आईं । उसको अपने सीने से लगाते हुए उसने कहा, "मेरे साथ रहेगा,...... अरे डरता क्यों है, मैं कोई डायन थोड़े ही हूं, जो मैं तुझे खा जाऊंगी । अरे राजा बेटे । अपने पास खूब आराम से रखूंगी । दोनों जून खूब खाना खिलाऊंगी । बन्ना उसकी ओर अर्थ भरी दृष्टि से देखता रहा है । फिर उसने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया । शायद खाने की बात ने उस पर रामबाण का असर किया हो । जब करुणी बन्ने को लेकर गूंगा के पास फुटपाथ पर पहुँची तो उसने तीखी नज़र उन पर डालते हुए पूछा, "इस खरगोश को कहां से पकड़ लाई है ?"

'चौरंगी से । अच्छा है ना, बिल्कुल मासूम ।" और करुणी उसके पास बैठती हुई बोली, "इस जहान में बेचारा अकेला है, इसका कोई नहीं है ।"

"अरे वाह ! तू भी खूब है, इस फुटपाथ पर ऐसे अकेले बहुत मिलेंगे, क्या तू सबको मेरे पास उठा लाएगी ?" गूंगा ने जरा गम्भीर किन्तु तेज स्वर में प्रश्न किया ।

"मैं क्यों उठा लाऊंगी ? दरअसल मैं इस पर रीझ गई थी । पन्द्रह वर्ष पहिले मैं इसी तरह तुम पर रीझी थी । तू भी इसी तरह मुझे मासूम और भोला लगा था । इसी तरह मैंने तुझे अकेला देखा था, देखा तो फिर देखती ही रह गई थी और मैंने तुरन्त तुझे अपना बना लिया, पर

तू निकला निकम्मा"""आज तक दो से तीन नहीं बना सका। अपनी बो सोबिता है ना, पूरे चार बच्चों की माँ बन गई है। और हम"" खैर, छोड़ इन बातों को, अब सब ठीक है, हम भी तीन हो गए ? गूंगा करुणी को प्रेमभरी नजर से अपलक देखता रहा। करुणी सिहर गई। तुरन्त बोली, "ऐसे क्यों देख रहा है मात-पिट्टे, जा कोई अच्छी सी साबुन ले आ।"

करुणी ने साबुन से बन्ने को नहलाया-धुलाया। उसे पेट भर खाना खिलाया। यही क्रम चला। फिर बन्ना धीरे धीरे करुणी को मां कहने लगा और गूंगा को काका। उसके साथी भिखारी अक्सर कहते हैं कि करुणी बड़ी चतुर है, आखिर अपने बुढ़ापे का सहारा ढूंढ ही लाई। पर वह दोनो इस बात की जरा भी परवाह नही करते हैं।

× × ×

रात सन्नाटे में सोई है। गूंगा दायी करवट बदलता है। अंधेरे की लकीर उसके नीचे आकर ठहर जाती है। सिपाही अपनी बीट पर चक्कर लगा रहा है। बड़ी देर से तकता तकता आखिर वह बन्ना के पास आता है। उसको झिंझोड़ता है। बन्ना गहरी नींद में निमग्न है। "ऊ""" करता हुआ दूसरी करवट सो जाता है। तभी गूंगा की आंख खुल जाती है। सिपाही द्वारा बन्ना को झिंझोड़ते देखकर उसे बहुत बुरा लगता है। गुस्से में बोलता है– 'क्या है सिपाही जी ?"

सिपाही घबरा कर बोलता है, "कुछ नहीं–कुछ नहीं। माचिस की पेटी खोज रहा हूँ। बरबस रामभुलावा बातों ही बातों में ले उड़ा।'

गूंगा माचिस देखभीते फेंक कर कहता है, "मेरा बच्चा बीड़ी नहीं पीता, समझे।"

उसकी कड़कती आवाज सुनकर रात के सन्नाटे में कम्पन भर आता है और सिपाही का अहम् ऐंठ आता है। वह एकदम खड़ा होता है। बोलता है, "साले कमले, आँखें क्यों दिखाता है ? दोनों आँखें फोड़ डालूंगा।"

गूंगा कुछ कहना चाहता है पर करुणी उसे संकेत से रोक देती है। सिपाही अपनी मूंछों पर ताव देता और भीतर ही भीतर उबलता अस्पष्ट स्वर में गालियां देता हुआ दूसरी ओर चला जाता है।

करुणी सहमते हुए कहती है– "तूने सांप को छेड़ कर अच्छा नहीं किया।"

"ऐसे सांप मैंने बहुत देखे हैं। लाठी से कुचलकर निकाल दूंगा।" वह तड़पकर कहता है।

"फिर भी हमें इनसे डर कर रहना चाहिए। यह नया आया हुआ सिपाही है।" करुणी सलाह के लहजे में कहती है ?"

पर यह चेहरे से ही कमीना लगता है, एकदम गंवार जानवर। पर तेरी कसम, इसने इस बार छेड़खानी की तो भरे बाजार में घूंसा मार दूंगा। बार बार पूछता है कि बच्चे को कहां से लाया ? मैंने कहा– हमने इस लावारिस को अपना बच्चा बनाया है।" गूंगा दृढ़ता से कहता है, "इस पर दो दिन से दो-दो रुपये मांग कर ले गया। कल पांच रुपये मांगे। मैंने नहीं दिये। चोर कहीं का। अबकी बार लड़ पड़ूंगा।"

करुणी उसका हाथ चूम लेती है,– "तू बहुत शेर–दिल है, बहुत अच्छा है।" फुटपाथ नींद की गोद में खर्राटे लेने लगता है।

लेकिन दूसरे ही दिन सिपाहियों की हल्ला गाड़ी आती है और गूंगा व करुणी को पकड़ ले जाती है। दिन भर की कैद काटकर वह दोनों वापिस आ जाते हैं। तब गूंगा उस सिपाही के बीच दुश्मनी खड़ी हो जाती है।

चौथे दिन वही सिपाही जिसका नाम गोविंदा था, एक शरीफ आदमी को लेकर आता है। गोविन्दा के साथ दो दूसरे सिपाही और होते हैं। फुटपाथ का निरीक्षण करते हुए गोविंदा गूंगा के सामने खड़ा हो जाता है। शरीफ आदमी को सम्बोधित करते हुए वह गरजता है—

"पहिचानो इनमें से अपने चोर को।" शरीफ आदमी हाथ के संकेत से गूंगा को बता देता है। गूंगा की भृकुटियां तन जाती हैं। वह ज़ोर से कहता है, "कौन चोर? कैसा चोर?"

"तू इन बाबू साब की बैठक के दरवाजे पर से एक चांदी का सेमन सेट उठा लाया है?"

"क्या होता है सेमन सेट?" उसने प्रश्न किया।

"चांदी की गिलासें।" शरीफ आदमी स्पष्ट करता है।

"झूठ, बिल्कुल झूठ। मैंने कोई चोरी नहीं की। यह आदमी मुझे फंसाना चाहता है। ये सिपाही नहीं, बदमाश हैं।"

एक थप्पड़ पड़ता है– गूंगा के गाल पर। दोनों पुलिस वाले उसे जबरदस्ती हथकड़ी पहनाते हैं। वह पागलों की तरह चीखता रहता है, चिल्लाता रहता है। निरन्तर गालियां निकालता रहता है जिसके बदले वह मार भी खाता रहता है। फिर लाकर थाने में उसे बन्द कर दिया जाता है। बाहर करणी आंखों में आंसू भरे खड़ी होती है। वह इस तरह बेचैन होकर चहल कदमी कर रही है जैसे किसी जल्लाद ने उसको तीरों से बिंध दिया हो। कभी कभी वह आवेश-आक्रोश में अपने पांव पटकती है। बार-बार थाने के दरवाजे की ओर देखती है।

एकाएक वह थाने के दरवाजे की ओर आ जाती है। गोविन्दा बीड़ी पीता हुआ बाहर निकल रहा है। वह उसके सामने होती है। हाथ जोड़ते हुए वह कांपते स्वर में बोलती है– "इसे छोड़ दीजिए, माई बाप, उसे छोड़ दीजिए, मैं आपको रुपए दूंगी, रुपए।

गोविन्दा घुड़की देता है– "दूर हटजा कमीनी, कानून मेरे बाप का नहीं है।"

करणी ने उसकी एक बात भी नहीं सुनी है। वह चीखती हुई उसके पीछे चलती रहती है। गोविन्दा शान से बीड़ी पी रहा है। पदाघात

लोग उन दोनों पर नजर डाल कर चल पड़ते हैं।

जब करुणी सिपाही का हाथ पकड़ लेती है, गोविन्दा एक दम रुक जाता है। गर्म होकर बोलता है,– हालो हटती है या मारु दो चार लातें, ठोकर से कलेजा बाहर निकाल दूंगा।"

"निकाल दे मेरा कलेजा बाहर, पर मेरे गूंगे को छोड़ दे।"

"उसे अब जज साहब ही छोड़ सकते हैं।" सिपाही गम्भीर स्वर में बताता है।

"तूं भी छोड़ सकता है।" करुणी क्रोध में बिफर पड़ती है। तूं ने उस पर झूठा इल्जाम लगाकर फंसाया है। अरे पापी, तू मुझसे किस जन्म का बदला ले रहा है? और उसका चेहरा आंसुओं से भर जाता है।

गोविन्दा सुन्न हो जाता है। आते-जाते लोगों के पांव थम जाते हैं। उनकी आंखों में प्रश्न तैर उठते हैं। गोविन्दा को अपने अन्तस का पाप कचोटने लगता है। उसका चेहरा स्याह हो जाता है। अपने हृदय की कमजोरी को छुपाने के लिए वह करुणी को पीटना शुरू कर देता है। हाथ पकड़ कर उसे घसीटने लगता है, 'चल, थाने चल हरामजादी। खामखा सड़क पर हल्ला मचाती है। मुझे परेशान करती है। तेरे यार ने चोरी की है, उसे सजा मिलेगी। जरूर मिलेगी।"

"उसने चोरी नहीं की है, चोरी तूं करना चाहता है, अपने इमानकी, अपने धर्म की, अपने फर्ज की, कितना गंदा है तूं। तू सिपाही नहीं, जल्लाद है।"

सिपाही उसे फिर पीटता है, उसे घसीटता हुआ थाने में ले जाता है, जहां उसे भी बन्द कर दिया जाता है। पर करूणी को सन्तोष होता है कि वह अपने गूंगे के पास है।

गोविन्दा पूर्ववत अपनी मूछों पर ताव देता हुआ बीड़ी का धूंआ उड़ाता हुआ बाहर निकलता है।

× × ×

रात उसी तरह सन्नाटे में डूबी हुई है । लैम्प पोस्ट का लट्टू खराब हो जाने की वजह से आज फुटपाथ पर धुंधला अन्धेरा है । लगता है — फुटपाथ रोशनी के बिना रडुआ हो गया है । जिस तरह कल रोशनी हत ठहरे हुए थे, उसी तरह आज अन्धेरे के हत ठहरे हुए हैं । सिपाही के नालदार जूतों की भीरस ठक ठक की आवाज आ रही है । गोविन्दा अपनी ओट पर बेचैनी से करवट निकाल रहा है ।

वह एक भिखारी के पांव पर अपना पांव रखता है । भिखारी चीख कर उठ जाता है । 'साला ऐसे चीखता है जैसे मैंने तेरी गर्दन पर छुरी भोंकदी हो ।"

भिखारी हाथ जोड़ कर बैठ जाता है । "ला बीड़ी पिला" । लैम्प पोस्ट के सहारे खड़ा होकर सिपाही आज्ञा देता है । भिखारी बीड़ी और माचिस निकाल कर देता है । बीड़ी सुलगा कर सिपाही पूछता है," क्यों रे, आज वह लड़का नहीं आया ?" उसके स्वर में गम्भीरता है और आंखों में एक विचित्र भूख ।

"कौन सा मालिक ?'

"जो गूंगा के साथ रहता है ।" उसने अपने सूखे होंठों पर जीभ फिरायी ।

"नहीं मालिक, सांझ होते होते गूंगा और कल्लो आये थे । वे बहुत उदास और उत्तेजित थे । उन्होंने अपना सारा सामान समेटा और यहां से चलते बने । बीस बरसों का बसा बसाया घर उजड़ गया बेचारों का ।" सिपाही के हृदय पर आघात सा लगता है वह सम्भल कर पूछता है । "लेकिन उसे तो चोरी के जुर्म में गिरफ्तार किया गया था ।" यह ठीक है, पर गूंगा कह रहा था कि थानेदार को बीस रुपये देकर वे दोनों छूट आये हैं ।

सिपाही क्षण भर के लिए निर्जीव हो जाता है । उसके सारे शरीर में जड़ता छा जाती है । वह थानेदार को गाली देता है साला, हरामजादा। बेईमान, रिश्वत खाता है । सब चोर ही चोर इकट्ठे हो गये हैं ।" और सहसा वह उदास हो जाता है जैसे वह अपने पापों से घिर गया है । जैसे वह भी चोर ही हो ।

यह भिखारी गोविन्दा से फिर कहता है— "गूंगा बड़े गुस्से में था । कह रहा था कि बीस साल से इस फुटपाथ पर रह रहा हूं, ऐसा कमीना आदमी मैंने नहीं देखा, दाव लगने पर जरूर छुरा भोंकूगा ।"

सिपाही थोड़ा बेचैन हो जाता है । अपनी नजर को इधर उधर नचाता हुआ बोलता है, "वह कहां गया है, यह कुछ मालुम है ?"

"नहीं, उसने कुछ भी नहीं बताया ।"

"सच-सच कहना, नहीं तो साले को डंडा मारूंगा ।"

"आपकी कसम मालिक, मैं कुछ नहीं जानता । लीजिए एक बीड़ी और पीजिए ।"

सिपाही बीड़ी सुलगाता है । अपनी आन्तरिक घुटन व आवेश में उसके मुंह से तुत् तत् निकलता है जैसे वह कुछ भयभीत हो । गया हो वह कुछ कहने के लिए जैसे ही भिखारी की ओर देखता है वैसे ही भिखारी फटी चादर में अपने को छुपाकर सो जाता है । सिपाही बड़बड़ाता हुआ चल पड़ता है । उसका सारा चेहरा बीड़ी के धुंए में खो जाता है ।

रात और सन्नाटे में डूब जाती है जैसे किसी बदमास ने उसके साथ जबरदस्ती करने की चेष्टा की हो और वह भय के मारे सांस भी न ले पायी हो ।

४

फिर वहार

लगभग तीन-साढ़े तीन वर्षों के बाद अचानक चांदनी चौक में मेरी भेंट शोभा से हुई। वह नयी सड़क से कुछ पुस्तकें खरीद कर आ रही थी। मुझे देखते ही वह चौंक पड़ी और उसकी आंखों में विस्मय तैर आया। सफेद साड़ी में उसकी सांवली आकृति आकर्षक लग रही थी। उसके होंठ सूखी मुस्कान में डूब गये। वह बोली, "आप !"

"क्यों, आश्चर्य हो रहा है !"

शोभा मौन रही ! वेदना उसकी सजल आंखों में दहक उठी। आरम्भ से ही वह बड़ डरपोक प्रकृति की थी इसलिए आज भी वह थर-थर कांपने लगी। मैंने सहज स्वर में कहा, "इन पुस्तकों की तुम्हें क्या जरूरत पड़ गयी ? तुम्हारे ससुराल वाले तो पढ़ाई-लिखाई के सख्त खिलाफ थे।"

वह भीतर ही भीतर घुट गयी। उसकी आंखों की वेदना और गहरी हो गयी। वह बोली, "यह सब घर पर बताऊंगी। तुम घर कब आ रहे हो ?"

मैं घर नहीं आ पाऊंगा। तुम तो जानती ही हो कि तुम्हारे पिताजी को मुझसे सख्त नफरत है।"

उसके स्वर में सहसा आदर का समावेश हो गया। वह नत नयन करके बोली, "सब कुछ बदल गया है। आप आ जाइए।" वह नमस्ते कहकर चली गयी। कुछ नहीं बोली। शोभा को ६ वर्षों से जानता हूँ। मैं उसका ट्यूटर था। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि उसका बाप नीलकण्ठ—

कंजूस व वहमी प्रकृति का है। पढ़ाने के समय कई बार वह चोर की तरह आकर देखता था। मैं सब जानता था, इसलिए कभी कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने दी जिससे उसके बाप को कुछ कहने का अवसर मिले। पैसों के मामले में वह मुझसे बहुत ही खुश था लेकिन कहीं उसकी लड़की कुछ कर न बैठे, इसलिए वह अपनी दोनों आंखों से पहरा लगाया करता था। लड़की को हर आधुनिक फैशन व लिबास से वंचित रखता था। मुझे अच्छी तरह याद है कि शोभा उन दिनों उदास व टूटी-टूटी रहती थी, व्यथा की परतन्त्रता व सन्देह उसको तोड़ दिया करते थे, पर इस देश की नारी अनेक प्रतिबन्धों में जकड़ी है। शोभा भी जकड़ी हुई थी। पर उसके पिता के लाख पहरा लगा देने के बावजूद भी हममें प्रणय जागा, आकर्षण उत्पन्न हुआ और हमें यह महसूस हुआ कि हम एक दूसरे के पूरक बन सकते हैं। किन्तु हमने कभी भी ऐसी शब्दावली का प्रयोग नहीं किया जो प्रायः कहानियों में होती है। अत्यन्त गम्भीर और मौन प्रणय।

आज का दिन और उसके बाद के रात्रि-क्षण बहुत ही आनन्द में बीते। सवेरे मैं जल्दी उठ गया। मेरे तन-मन में नयी स्फूर्ति आ गयी। प्राणों में नया उत्साह आ गया। विस्मृति में जाने वाले सारे सन्दर्भ ताजा हो गये। झटपट तैयार होकर मैं शोभा के घर जा पहुंचा। वह मेरी पहले से ही प्रतीक्षा कर रही थी। दरवाजे के बीचोबीच खड़ी। उसके होंठ मुस्कान में डूबे हुए थे। मुझे उसकी मुस्कान बहुत अच्छी लगी। सहसा मेरे मन में कुछ ऐसे विचार आये जिन्हें मैंने रोका और मैं सोचने लगा कि वह विवाहिता है, परकीया है। मुझे अपने-आपको मर्यादा की मजबूत चाहरदीवारी में बन्द रखना चाहिये।

वह मुझे भीतर ले गयी। उसका बाप, वही कंजूस और निर्दयी बाप अपने उसी गन्दे और बेतरतीब कमरे में बैठा हुआ बहियां देख रहा था। मैंने जाकर उन्हें नमस्ते की और पूछा, "क्या हाल चाल है सेठजी ?"

मैंने पहली बार नीलकण्ठजी के भद्दे होंठों पर एक मीठी मुस्कान

देखी। मुझे बहुत ही आश्चर्य हुआ। यह बूढ़ा मुस्करा रहा है? एक प्रश्न-सा मेरे मन में आया।

"आओ, आओ, मास्टरजी! कैसे हैं आप? इन वर्षों में आकर कभी सम्भाला ही नहीं।" फिर वह अपने-आप से बड़बड़ाया, 'आजकल हर आदमी व्यापारिक सम्बन्ध ही रख रहा है। कोई क्या करे, जमाना ही ऐसा है।' पहली बार उसने शोभा को कहा, "शोभा! देख मास्टरजी आये हैं, जरा इन्हें चायवाय पिला।"

मैं हतप्रभ हो गया। सेठजी को कोई भयानक आँच लगी है, वर्ना ये पिघलने वाले नहीं। मैंने स्नेह से पूछा, "आपकी तबीयत कैसी है, सेठजी?"

"जी रहा हूँ। जो बुरे कर्म जन्म भर किये, उन्हें अब भोग रहा हूँ। न खाया और न जीया। खूब लुटाया। एक नहीं, दस-दस प्रतिशत ब्याज लिया। लोगों को हजार की चीज पाँच सौ में हड़पी। सच बेटा, किसकी चीज को किस तरह से हड़पनी चाहिये, इसमें मैं उस्ताद था। बुरा आचरण करते-करते पापी बन गया। अब इस मकान के किराये से पेट भर लेता हूँ और···

"आइए।" बीच में ही शोभा आ गयी थी। सेठजी चुप हो गये। विषाद की गहरी परत उनके सारे चेहरे को ढँक गयी थी। मैं मन में सोचने लगा कि यह दुष्ट व कठोर प्रकृति का व्यक्ति इतनी पीड़ा का एहसास कैसे करने लग गया है? जरूर इसके हृदय पर कोई गहरा आघात लगा होगा।

मैं बहुत गम्भीर हो गया था। मेरे मानस के भावों को ताड़ती हुई शोभा बोली, "समय सबसे शक्तिवान होता है, प्रमोद। अच्छी-अच्छी चट्टान को तोड़ देता है। बुरे से बुरे इन्सानों को सही रास्ते पर ला देता है।" हम दोनों चाय के प्याले लेकर आमने-सामने बैठ गये। सेठजी

मेज-कुर्सी को आज तक घर में घुसने ही नहीं दिया था। पैसे मर्न करना ये चाहते ही नहीं थे और तोहमत देते रहते थे। अंग्रेजी सभ्यता को ये। 'मेज कुर्सियां हमारी सभ्यता की नहीं है।' इस वाक्य को बार-बार वे दोहराते थे।

"क्या सोचने लगे!" शोभा ने मेरा ध्यान भंग किया··· "सोच रहे होंगे कि यह आदमी कितना बदल गया है। प्रमोद! परिस्थिति बहुत बड़ी चीज होती है। यह सबको तोड़ देता है।··· तुम्हें तो मालूम ही है कि जिस दिन तुमने पिताजी से यह कहा कि मैं शोभा से विवाह करना चाहता हूँ, उसी दिन उन्होंने तुम्हारा यहां आना-जाना बन्द करा दिया था। मुझे अच्छी तरह याद है कि पिताजी ने तुम्हें क्या-क्या कहा था? "प्रमोद!" अपने पेशे की पवित्रता को पहचानो। अपने खानदान व रक्त को पहचानो। अपनी हैसियत को जानो।"

"मैं सभी हालात को देखकर ही आपसे कह रहा हूँ। इसलिए कह रहा कि हम दोनों का गृहस्थ जीवन सुख से बीत जायेगा।" तुमने उत्तर दिया था।

"जो दस-दस रुपयों के ट्यूशन करता है, वह किसी को कैसे सुख से रख सकता है? मैं समझता हूँ तुम्हारा ध्यान मेरे धन पर है।"

"मुझे समझने की चेष्टा कीजिए। मैं एक सुखी जीवन की कल्पना कर रहा हूँ।"

"मुझे इस कल्पना में दुःख ही दुःख नजर आ रहा है। ऐसा मालूम होता है कि आने वाला हर पल संकटों से घिरा होगा। मास्टरजी, मुझे बनाने की चेष्टा मत कीजिए।"

···पिताजी हजार बार समझाने के बाद भी नहीं समझे और मुझे याद है कि उस दिन के बाद मेरे घर के दरवाजे तुम्हारे लिए सदा-सदा के वास्ते बन्द हो गये थे।··· मैं तुम्हें अब बता रही हूँ कि मुझे तब बहुत

दुःख हुआ था। कुछ भी अच्छा नहीं लगा। सब व्यर्थ, एकदम व्यर्थ! पर तुम तो जानते ही हो कि मैं डरपोक प्रकृति की रही हूँ। तब मुझमें विद्रोह की जरा-सी भी भावना नहीं थी। मैं घुटती रही। फिर पिताजी ने मेरा विवाह एक स्वजातीय लड़के से कर दिया। लड़का साधारण क्लर्क था। तुम अखबार में पढ़ते ही होगे कि फलां सास ने अपने बेटे को सिखा-पढ़ाकर बहू को पिटवाया। मेरे कंजूस पिता ने एक-एक पाई दूसरों का बुरा करके इकट्ठी की थी, वह उसके हाथ से जाने लगी। तीन हजार में सौदा तय हुआ था, ठीक विवाह-मण्डप में सात हजार हो गये। दो-तीन हजार ऊपर खर्च हो गये। तुम उस दिन देखते कि मेरा बाप कितना दीन दिखायी पड़ रहा था, जिसने एक-एक पैसा पेट काट-काटकर इकट्ठा किया था, वह पैसा यों ही लुट गया। इस पर भी मुझे सुख नहीं। मेरे ससुरजी मेरे पिताजी को लिखते रहते कि आपने हमें लूट लिया। बात-बात पर मुझे पीटते। अन्त में उन्होंने मेरे बाप को लिखा कि आपके तो कोई सन्तान नहीं है, इसलिए आप अपना यह मकान मेरे बेटे के नाम से करा दीजिए।··· प्रमोद! इस मकान को हड़पने के लिए उन लोगों ने मुझ पर क्या-क्या जुल्म नहीं किये? सास भी लकड़ी से कभी-कभी पीटती थी। इस मकान की वजह से मेरा क्या, सारे घर वालों का जीवन जहर बन गया।··· और मेरे पतिदेव, मिट्टी के एक पुतले के रूप में मैंने उस इंसान को देखा।··· तुम तो जानते ही हो कि मैं सदा भावुक प्रकृति की रही हूँ। मैं डरपोक प्रकृति की जरूर हूँ पर मेरे कल्पना लोक में कोमल भावनाओं का एक महल-सा है। सदा सोचती थी— ईश्वर ने मुझे जीवन दिया है, पर एक सजा के रूप में। सजा इसलिए कि बचपन में माँ मर गयी। बाप वहमी और कंजूस। इसके बाद दूसरा दौर शुरू होता है— सास-ससुर का। पति का। वे भी सबके सब कठोर-क्रूर ही निकले। तुम्हीं बताओ कि ऐसा जीवन सजा नहीं? यदि सजा नहीं तो मैं तुम्हें क्यों नहीं मिली? क्यों ईश्वर मुझसे तुम्हें छीनता?··· प्रमोद! इतनी अथाह-

सही है, कह नहीं सकती। घुटन, तड़प और अत्याचार ! समस्त पृथ्वी की वेदना !… फिर एक दिन उन्होंने तय किया कि इसे किरोसिन डालकर जला दिया जाय। मेरी सास एक राक्षसी सास थी। लगता था कि अपराध और हिंसा उसके खून में है। वह मुझे जन्मजात अपराधिन लगी। मैंने एक रात पिताजी को लिखा कि वे मुझे जान से मारना चाहते हैं। मेरा जीवन खतरे में है, आप आकर मुझे ले जाइए।… पिताजी मुझे लेने आये। पर उन दुष्टों ने नहीं भेजा। साफ कह दिया कि मकान दे दो तो ले जाओ, वरना सदा…सदा के लिए सम्बन्ध विच्छेद !… पिताजी डर गये। ऐसी विकट परिस्थिति उन्होंने कभी नहीं देखी थी। विमूढ़ हो गये। उनका चेहरा करुणा से भर गया। मैंने उन्हें कहा कि आप जाइए।… वे चले आये। उन्होंने कहा कि मेरी जरूरत पड़े तो लिखना।…रात को मैंने अपने पति से बातचीत की। मां को छोड़ने के लिए वे तैयार नहीं हुए ! कह दिया कि तुम्हारे पिताजी को आखिर उस मकान से इतना मोह क्यों है।…मैंने उन्हें समझाया कि आप अपने माता-पिता का स्वभाव तो जानते ही हैं—मकान कब्जे में आते ही वे मेरे गरीब बाप पर अत्याचार करेंगे। मैं ऐसा नहीं होने दूंगी।

धीरे-धीरे घर का जहरीला वातावरण बढ़ता गया। और एक दिन मैं स्वयं अपने-आपको उन जल्लादों से बचाने के लिए साहस करके वहां से भाग आयी। मुझे आये लगभग डेढ़ साल हो गया है। मैंने सेकण्ड ईयर टी. डी. सी. पास कर लिया। कचहरी में मैंने तलाक की अर्जी पेश कर दी है।…

"लेकिन तुमने मुझे याद क्यों नहीं किया।"

"सोच रही थी—अपने दुख से क्यों किसी को दुखी करूं ? फिर मुझे लगता था कि यदि उस समय मुझमें साहस होता, तो मैं तुम्हारे प्रति अन्याय भी नहीं होने देती।"

[redacted] बात को समाप्त करते हुए कहा, 'पहले पढ़ाई खत्म कर लो। सब ठीक हो जायेगा।'

वहां से मैं बहुत ही बोझिल होकर आया। मेरे अपने नैतिक संस्कार अलग थे। मैंने उसे पढ़ाई में मदद देनी शुरू की, साथ ही मैंने उस टूटे हुए रिश्ते को पुनः जोड़ने के लिए भी प्रयत्न किया। शोभा हर बार निराशा से कहती थी, 'अपना समय बरबाद न करो। क्यों मुझे उस नरक में धकेल रहे हो।' पर मैंने उसकी एक भी नहीं सुनी। उसकी सास के पास गया। उसकी सास को समझाया। वह जरा भी प्रभावित नहीं हुई। मेरी हर बात का उसने उलटा अर्थ लगाया। अन्त में उसने कहा, 'आपको क्या तकलीफ हो रही है, आप हमारे बीच में पड़ने वाले कौन हैं? क्या आप उसके भाई लगते हैं? महाशयजी, हम आपको खूब पहचानते हैं। आप और हमारी सतवन्ती बहू के किस्से बहुत सुन चुके हैं। आप उससे सच्चा प्रेम...' मैं उठ आया। उसके पति को समझाया। वह भी मूर्ख उलटा मुझे ही काटने लगा। उसने तो इतनी खोटी-खरी बातें कीं कि मेरी इच्छा हुई कि मैं उसे झापड़ रसीद कर दूं। पर मैं चुपचाप उठकर चला आया। शोभा को मैंने शर्म के मारे बहुत सी बातें नहीं बतायीं पर उसने कुछ बातें सुनकर यही कहा, 'वे लोग हमारे लायक नहीं हैं और हम उनके लायक। फिर तुम संस्कारों से आतंकित होकर पुनः समझौते की ओर क्यों भाग रहे हो? जो क्षण लौट गये हैं, वे वापिस नहीं आने के। हमें अतीत से सम्मोह छोड़ना ही पड़ेगा।'

मैं कुछ नहीं बोला। मेरी मानसिक स्थिति अजीब थी। लगता था कि मैं उलझनों के जाल में फंस गया हूं। मैं कहता तो यह था कि शोभा डरपोक है पर वस्तुतः मैं अपने को डरपोक समझने लगा। धर्म, ईश्वर और समाज। धीरे धीरे मुझे भय लगने लगा और मेरे मन में यह विचार आया कि मुझे शोभा के घर नहीं जाना चाहिए। वहां जाना मेरे लिए अच्छा नहीं रहता। लोग अजीब अजीब सी बातें करते हैं।

दिन मेरे ही एक मित्र ने बताया कि शोभा अपने पति से सिर्फ तलाक इसलिए ले रही है कि वह मुझे चाहती है। मैं मन ही मन भयभीत हो गया। सचमुच मैंने उधर जाना बन्द कर दिया। शोभा के बी. ए. करते करते तीन वर्ष की अवधि, तलाक की अवधि, समाप्त हो गयी और शोभा को कानूनन तलाक भी मिल गया।

फिर वह एक दिन उदास-उदास सी मेरे घर आयी। मेरी बूढ़ी मां ने उसका स्वागत किया। स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेर कर कहा, 'भगवान तुम्हें चिरायु रखे। प्रमोद तुम्हारी बहुत ही प्रशंसा करता रहता है। पर मैंने उसे साफ कह दिया है कि किसी दूसरे की पत्नी को बहू बनाना धर्मसंगत और न्यायसंगत दोनों नहीं हैं।'

'पर मैं अब किसी की पत्नी नहीं हूँ।'

'कैसे ?'

'मैंने तलाक ले लिया है।'

मां ने चौंककर पूछा, 'मरा यह तलाक हिन्दुओं में भी आ गया।'

शोभा डर गयी। मैं भी मां के पीछे खड़ा हो गया। मां ने व्यथापूरित स्वर में कहा, 'यह तलाक पहले क्यों नहीं आया ?' हम दोनों सकते में आ गये। एक दूसरे को देखने लगे। शोभा मां के पास और सरककर आ गयी। मां की आंखें गीली हो गयीं। वह फिर बोली, 'यह मरा तलाक पहले क्यों नहीं आ गया। यदि आ गया था तो हम औरतों में इतना साहस क्यों नहीं आया ?—बेटी ! धर्म और समाज ने हमें पंगु बना दिया है। आज तुम्हारे साहस और दृढ़ता को देखकर मेरा रोम-रोम पुलकित हो गया है। मैंने इतना दर्द-भरा जीवन जिया है कि बेटी कह नहीं सकती। गरीब की बेटी होने से सारा जीवन मैंने अपने ससुराल वालों के जुल्म सहे, शराबी पति की मार और लातें सहीं। बेटी ! मरा यह साहस तब कहां चला गया था ? उफ ! वर्षों हो गये हैं उन बातों को, पर पीड़ा आज भी है। रोमांच आज भी होता है। तब दिन को मार

जाकर रात को कन्या का शृंगार करना पड़ता था। कितने दर्दनाक पल होते थे वे ? अच्छा किया कि तुमने मुक्ति ले ली।'

'यह सब आपकी कृपा है।'

मां हंस पड़ी, 'व्यर्थ का यश दे रही हो। बेटी ! यह साहस मुझ में होता तो मुझे पश्चाताप न करना पड़ता।···और कहो।' वह सहसा प्रसंग बदल कर बोली, 'तुम ?'

'मैं बी. ए. में पास हो गयी, मांजी !'

'यह तुमने बहुत अच्छी खबर सुनायी। अरे प्रमोद ! शोभा को मिठाई लाकर खिला।' मैं शोभा के टोकने पर ही चला गया। रास्ते में सोचता रहा कि ईश्वर मुझमें ऐसा साहस क्यों नहीं भरता जिससे मैं उसे विवाह का प्रस्ताव कर दूं फिर हमारा जीवन नयी बहारों से भर जायेगा।

वातावरण में संगीत-सा उभर आया था और मेरा मन सुखद सपनों में झूल गया।

५

सौदा

●

सूरज ढलने के कुछ पहले ही इस मोहल्ले में धुएं की लपटें नागिन-सी बल खाती आकाश की ओर उठने लगती हैं। वे धीरे धीरे इतनी गहरी हो जाती हैं कि सूरज ने क्षितिज के होंठों का कब चुम्बन लिया और कब सन्ध्या का आंचल संसार पर फैला, इसका इस मोहल्ले के लोगों को पता ही नहीं चलता—सिर्फ़ धुआं और घुटन ! इसके साथ-साथ अर्ध नंगधड़ंग बच्चों की कांय-कांय, कुत्तों की भौं-भौं और बकरों की दोनों टांगें उठाकर आपस में लड़ना, इस मोहल्ले के वातावरण की खास विशेषताएं हैं।

पीरअली इसी मोहल्ले में रहता है। उम्र तीस–बत्तीस, सुन्दर गोरा चेहरा। सिर पर छोटे-छोटे लहरेदार बाल। आंखों से झांकती एक अजीब आकर्षक सलोनी प्यास।

यहां उसका अपना कच्चा खानदानी मकान है। जिसके कमरों की खिड़कियां चीथड़ों से ढकी हुई हैं।

पीरअली का अपना परिवार है। एक बीवी, चार लड़के और तीन लड़कियां। काम है तांगा चलाना। जितना कमाता है, बीड़ी और चाय के खर्चे के अतिरिक्त, सब अपनी बीवी को दे देता है।

× × ×

सर्दी का मौसम। सदा की तरह पीरअली रात के लगभग ग्यारह

बज घर आया।

इधर-उधर नजर दौड़ाकर कहा, आसिफ की माँ, आज इतनी जल्दी सो गई क्या ?'

उसकी बीवी मेहताब सदा अपने चारों ओर बच्चों की दुनिया को लिये सोई हुई थी। जैसे कोई कुतिया पड़ी हो। अभी भी सबसे छोटा बच्चा रशीद उसके सूखे स्तन को झकोड़ रहा है। वह रोगी की तरह उठी और बोली, 'जल्दी कहाँ है क्या वक्त हो गया, देखो। घोड़ा रोज की तरह हिनहिना रहा है। पूरे ग्यारह बजे हैं।'

थका-सा पीरबलो ने कहा, 'अच्छा खाना खिलाओ, बड़ी भूख लगी है। क्या बनाया है ?'

मेहताब अपने दुबले-पतले बच्चे को गोद में लिये पीरबलो के पास बैठकर बोली, 'मूंग की दाल और रोटी। आज तुम बाजार में मिले ही नहीं, इसलिए साग नहीं मंगा सकी।'

'मिला कैसे नहीं, वहीं खड़ा तो था।'

'मैंने आसिफ को भेजा था।'... क्यों आसिफ ?' पीरबलो ने पूछा।

आसिफ ने कोई जवाब नहीं दिया।

'मालूम होता है वह सो गया है।' मेहताब ने अपने आप से कहा, 'बेचारा छोटे भाई-बहिनों को खेलाते-खेलाते थक जाता है।'

पीरबलो खाते खाते सोचने लगा। फिर मेहताब की ओर देखते हुए बोला, 'आजकल तुम दुबली हो गई हो।'

'नहीं तो ?' चौंककर मेहताब की नजर अपने सारे शरीर पर दौड़ गई। 'वहम है। फिर औरत सदा जवान तो नहीं रहती। एक-न-एक दिन उसे बूढ़ी होना ही है।' वह हंस दी।

पीरबलो को उसकी हंसी चोट सी लगी। वह उदास हो गया। मेहताब मुस्कराकर बोली, 'तुम भी क्या खूब हो जी, सात बच्चों की अम्मा

हैं, एक मर गया और एक पेट में है।'

पीरअली पर पहाड़ टूट पड़ा। बोला, 'क्या.. कहती हो आसिफ की अम्मा ?'

'ठीक ही कहती हूँ।'

'यह तो बहुत बुरा हुआ।

'तकदीर का लिखा कभी मिटा है ? और फिर खुदा जितने बाल बच्चे देना चाहेगा, उतने तो होंगे ही।'

'नहीं, नहीं। मैं खुदा से इल्तिजा करूंगा। मैं अब बच्चा नहीं चाहता, कतई नहीं।'

'पर आज तुम इतने क्यों घबरा गए हो ?' मेहताब ने पूछा।

'मेहताब, एक जान से दूसरी जान का पैदा होना आसान नहीं होता। तुम नहीं जानती कि तुम क्या हो गई हो ? बारह-तेरह बरस में आठ-आठ बच्चे !'

पीरअली कहता जा रहा था और मेहताब अबोध बालक की तरह निर्दोष दृष्टि से देखती हुई सुन रही थी। तभी जेल की घड़ी ने बारह के घन्टे बजाए।

स्वप्न में चौंकती हुई वह बोली, 'अरे आसिफ के अब्बा, बारह बज गए हैं, रोटी खा लो पहले, बातें तो बाद में भी होती रहेंगी।'

''हां-हां तुम ठीक कहती हो।

कहकर पीरअली दाल में भिगो-भिगोकर रोटियां निगलने लगा।

खाना खाकर पीरअली ने कुल्ला किया। एक बार घोड़े को जाकर देखा और बीबी के पास आकर लेट गया।

× × ×

रशीद भी सो गया था। पूर्ण सन्नाटा था। हमीदा की नाक कभी कभी उस सन्नाटे को भेद देती थी। पर पीरअली के विचार जाग रहे/ [illegible]। हो गई थी उसकी मेहताब ? उसने इस गरीब को

कभी भी चैन नहीं लेने दिया। जिसकी जिन्दगी से आराम उसके साथ आने के बाद से दूर, बहुत दूर चला गया था।

'आसिफ की अम्मा !'

'क्या ?'

'एक बात कहूँ अगर तू बुरा न मानो।'

'कहो !'

वह कुछ झिझककर बोला, तुम फातिमा दादी से मिलकर पेट के बच्चे ..!

'या खुदा, जीव की हत्या ? न-न, यह तो उसकी अमानत है, इसकी तो हमें हिफाजत करनी है।' दोनों थोड़ी देर तक चुप रहे। मेहताब का रक्त-विहीन मुख आरक्त हो उठा। होंठों पर हल्की मुस्कान लाती हुई बोली, 'मुझे एक बात का डर है ?'

'क्या ?'

'इस बार दो होंगे ?'

'या खुदा ?' पीरअली को लगा मानो वह चारों तरफ से शिकारियों से घिर गया हो। थोड़ी देर बाद वह मेहताब का हाथ अपने हाथ में ले—उसे सहलाता बोला, 'बड़ी मुश्किल हो जाएगी।'

मेहताब ने तिरछी निगाह से पीरअली को देखा और वह उसकी ठोड़ी पर अपनी अंगुलियाँ दौड़ाने लगी। उसने अपनी बाँहें उस पर फैला दी। पीरअली जीवन के समस्त दुखों को विस्मृत कर अपनी पत्नी को बाँहों में लेकर उन उन्मादित—उत्तेजित क्षणों की सर्जना करने बैठा, जिन क्षणों में वह सम्राट होता था। दीवार पर टंगी खूबसूरत तस्वीर की ओर संकेत करके वह बोला, 'कभी-कभी तुम मुझे उस तस्वीर से भी खूबसूरत लगती हो।'

'ऐसी कब लगती हूँ ?' मेहताब ने हंस करके पूछा।

'अभी,' और पीरअली की दोनों बाँहें नागिन-सी

करने लगीं कि किसी ने उनका दरवाज़ा खटखटाया।

शरीरों की जुम्बिश ढीली पड़ गई। 'आधी रात गए कौन आता है?' दोनों एक साथ बुदबुदाए।

× × ×

आगन्तुक ऐसा था जिससे मिलते ही पीरअली की निगाहें झुक गईं। "मैंने तुझे ऐसा नहीं समझा था।" आगन्तुक ने डांट कर कहा।

"सेठ साहब, कसम खाकर कहता हूँ कि बाजार बड़ा मंदा है, दो-तीन रुपयों से ज्यादा की मजूरी होती ही नहीं।"

"चुप रह हरामी।" सेठ गुर्राया, "तीन साल से झांसे दे रहा है। देख, दो दिन तक सारे रुपये ले आना, वरना तांगा-घोड़ा कुड़क करा दूंगा।"

"कुछ दिन की मोहलत और···।"

"बिलकुल नहीं, मैं भगवान की कसम खाकर आया हूँ कि परसों दस बजे तक रुपये नहीं मिले तो तेरा घोड़ा-तांगा कुड़क करा दूंगा। मैं अपनी कसम नहीं तोड़ सकता। अभी तो मैं तुम्हें आगाह करने आया हूँ।"

× × ×

सुबह मेहताब ने उठकर द्वार खोला। दरवाजे पर अख्तर को देखते ही उसकी त्योरी बदल गई। वह पूछना चाहती थी कि अख्तर भीतर घुसती चली आई। "कौन था मुआ जो रात जाने क्या अनाप-सनाप बक रहा था?" उसने पीरअली से पूछा।

पीरअली और मेहताब दोनों को चुप देखकर वह और जोर से बोली, "अरे, बोलते क्यों नहीं, कौन था वह?"

"वह सूदखोर था।" मुर्दा आवाज में पीरअली बोला।

"चोट्टा कहीं का।" वह घृणा से बोली, "मैं उसको ठीक कर दूंगी। न करो पीरअली। वह तुम्हारा तांगा-घोड़ा नहीं ले जाएगा।"

पीरअली की ओर उसने अर्थभरी दृष्टि से देखा और मेहताब ने देखा अख्तर को।

पीरअली ने विनम्रता से कहा, "अख्तर बेगम, यदि तांगा घोड़ा चला गया तो ये बच्चे दाने-दाने के मुंहताज हो जाएंगे। इन पर आफतों का पहाड़ टूट जाएगा, तुम पैसेवाली हो, खुदा का दिया तुम्हारे पास सब है। थोड़ा-सा रहम कर दो तो बस !"

"मैं अपना सब कुछ लुटाकर भी तुम्हारे तांगे-घोड़े को यहां से नहीं जाने दूंगी। जब वह आये तो मुझसे मिल लेना···" और अख्तर एक तेज निगाह मेहताब पर फेंकती, चली गई। उसके पतले-पतले होंठों पर एक भेद-भरी मुस्कान थी, जिसका मर्म केवल मेहताब ही जान सकी।

× × ×

सवेरे जब पीरअली अख्तर के पास गया, अख्तर, कुरान शरीफ पढ़ रही थी। पीरअली को देखते ही उसने पवित्र ग्रंथ को रख और कहा, "आ गए तुम, चाय पियोगे ?

"नहीं अख्तर बेगम, चाय हलक से भी नहीं उतरती। तांगा-घोड़ा जाने के बाद, कुनबे की हालत क्या होगी, कह नहीं सकता।"

"सुनो पीरअली, रुपया मैं तुम्हें उधार दूंगी। तुम्हारा तांगा-घोड़ा मेरे नाम से होगा। सूद तुम्हें नहीं देना पड़ेगा पर सूद के बदले मैं तुमसे एक चीज चाहूँगी।"

'मैं तुम्हें अपनी जान भी दे सकता हूं।'

'जान को तो मैं नहीं संभाल सकती ? मुझे सिर्फ तुम्हारी मोहब्बत चाहिए, प्यार चाहिए।"

"अख्तर !" चौंक पड़ा पीरअली।

"बोलो, सौदा मंजूर है। मरने के बाद यह सारी दौलत भी तुम्हारी होगी।"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे तुम्हारी वाहियात शर्त मंजूर नहीं"

"सोच लो।"

"सोच लिया।" कहकर पीरअली लौट आया। मेहताब ने पूछा, तो उसने बताया, "वह रुपयों के बदले मुझे चाहती है। मुझे यह मंजूर नहीं। मैं......।"

मेहताब की आंखों से आंसू टपक पड़े। वह आंसू पोंछकर बोली, तुम्हें और क्या कोशिश करनी चाहिए। भागो-दौड़ो तो सही।"

पीरअली बाहर चला गया।

× × ×

लाख कोशिशों के बाद भी पीरअली अपने तांगे-घोड़े को नहीं बचा सका। घोड़े को उसने आंसुओं-भरी विदाई दी। उसका बड़ा लड़का रहीम रोने लगा था। मेहताब ने अपने मुंह में कपड़ा ठूंस लिया, ताकि रुलाई बाहर न निकले। हां अख्तर खड़ी-खड़ी देख रही थी। उसके चेहरे पर विजय की रेखाएं थीं।

जब सब कुछ चला गया तब पीरअली भी गुमसुम-सा बैठ गया। कुछ देर बाद वह बाहर चला गया। रात को जब वह लौटा तो घर में कुहराम मचा था। बच्चे रोटी-रोटी चिल्ला रहे थे। बनिये ने साफ-साफ मेहताब से कह दिया था कि तांगा घोड़ा नहीं, तो उधार भी नहीं!

मेहताब ने होले से पूछा, 'दूसरा काम मिला?"

"काम आसानी से नहीं मिल सकता। ठेकेदार ने चार रोज के बाद बुलाया है।"

"चार दिन के बाद?"

"हां।"

"बाप रे! तब तक तो बच्चे मर नहीं जाएंगे? आसिफ के अब्बा, तुम उन्हें अभी जाकर कहो कि हमारे बच्चे भूखों मर जाएंगे। मुझे वक्त काम दो।"

"ठेकेदार मेरे चाचा नहीं हैं।" पीरश्ली के स्वर में झुंझलाहट थी और मेहताब की नजरों में प्रश्न। वह कुछ नहीं बोली। बच्चों को समझा-बुझाकर सुलाने लगी। धीरे-धीरे सब सो गए।

× × ×

दूसरा तीसरा और चौथा दिन भी बीता।

मेहताब ने सारे बरतन बेच दिए। पीरश्ली को अब भी काम नहीं मिला। बच्चों की हालत खराब हो रही थी। आखिर मेहताब ने मस्तर की बात मानने को पीरश्ली से कहा। उसने उस पर दबाव भी डाला। उसने पीरश्ली को यह भी कहा कि वह उससे निकाह भी कर सकता है। पर पीरश्ली राजी नहीं हुआ। वह अपना सर्वनाश कर लेगा पर यह सौदा नहीं करेगा। उसने मेहताब से कहा, "नहीं तुमने मेरे साथ जिन्दगी में इतनी तकलीफें उठाई है, उसे मैं नहीं भूल सकता। वह छिनाल और बदमाश मस्तर मुझे नहीं खरीद सकती।"

"मस्तर तुम्हें मुझसे छीनती थोड़े ही है। फिर छोटी-सी बात के लिए इन सबको क्यों बरबाद करते हो?" उसका संकेत बच्चों की ओर था।

'बरबाद हो जाऊंगा मेहताब, जरा सोचो यह अदमर तुम उठा लोगी? तुम्हें यह सब बर्दाश्त होगा?"

"मैं सब सह लूंगी। मुझे मेरे बच्चों की जिन्दगी चाहिए। तुम अपना सौदा-सोहा ले आओ। तुम्हें मेरी कसम है!"

"मेहताब!"

"देखो आसिफ के अब्बा, यह तो सौदा है। जबरदस्ती और मजबूरी का सौदा है। दिल का नहीं। मैं तुम्हारे दिल की रानी हूँ। अगर तुम थोड़ा भी अक्ल से काम लोगे तो तुम्हारे बच्चों की जिन्दगी सुधर जाएगी। उस छिनाल मस्तर के पास बड़ी दौलत है।"

"मुझे डर लगता है।" उसने अपने शब्दों पर जोर देकर कहा।

"यकीन रखो, खुदा जो करता है, अच्छा ही करता है। बच्चों को भूखों मारने से अच्छा है कि..."

× × ×

पीरअली के घर के आगे उसका घोड़ा फिर से हिनहिनाने लगा। सब बच्चों के नये कपड़े बने। मेहताब के लिए भी नया चूड़ीदार पायजामा, कुरता और ओढ़नी खरीदे गए। पीरअली की भी काया पर नये वस्त्रों की पलट हुई। सब ठीक हो गया। मेहताब ने अख्तर से अपनी हार मान ली। अख्तर को इससे बड़ा संतोष हुआ। हर दूसरे तीसरे दिन पीरअली अख्तर के पास रात को चला जाता था।

× × ×

पीरअली हर दूसरी रात मेहताब से प्यार की बहुत ही उम्दा बातें करता और उसे विश्वास दिलाता कि उसे तहे दिल से चाहता है। उसके लिए दुनिया में केवल एक ही हूर है, वह है मेहताब, उसकी मलक-ए-नूर मेहताब!

मेहताब अपने अभावग्रस्त जीवन की थोड़ी पूर्णता देखकर संतोष पाती थी। पेट का बच्चा बढ़ रहा था, इसलिए वह पीरअली में पहले जैसी आसक्ति न पाकर भी अधिक संदेह नहीं करती थी। बच्चे इस सौदे से सर्वथा अनजान थे।

यों तीन माह गुजर गए। पीरअली पिछले तीन दिन से घर नहीं आया था। मेहताब बेचैन थी। पीरअली झूठे-सच्चे बहाने बनाता रहा। कल की तरह आज भी उसने बहाना बनाया, "अख्तर को रात में भूत दीखते हैं, इसलिए मैं उसे छोड़कर तुम्हारे पास नहीं आ सका।"

"मुझे भी डर लगता है।" मेहताब ने कहा।

'तुम समझती क्यों नहीं। वह नाराज हो जाएगी तो हम पर

शफर माफत टूट जाएगी । जरा समझदारी से काम लो । मेहताब, तांगा-घोड़ा भी तो उसीके नाम है ।" वह बोला ।

"लेकिन..." कहकर मेहताब चुप कर जाती ।

और अब पीरअली दस-दस दिन तक गायब रहता । मेहताब को अच्छा खाना, पहनना, और बिछौना सभी कुछ मिलने लगा था पर पीर के बिना उसको कुछ भी नहीं सुहाता । वह रात में दिये की लौ पर टकटकी लगाए बैठी रहती थी । उसे नींद नहीं आती थी । उसे लगता था कि दिन और जिस्म के सौदे में उसका दिल हार गया । वह बेचैन हो उठती । रात के एक बजे थे । वह उठी और अख्तर के मकान के पीछे की खिड़की के दरवाजों की सूराख में से देखने लगी—पीरअली शराब पीकर मदमस्त अख्तर को गोद में लिये बैठा है ।

× × ×

इसके बाद दो ही घटनाएं हुईं । पहली घटना: चन्द महीनों के बाद दुखी मेहताब ने एक साथ दो बच्चों को जन्म दिया ।

न बच्चे बचे और न जच्चा ।

दूसरी घटना यह हुई कि अख्तर ने पीरअली को साफ-साफ कह दिया कि वह इन बच्चों को नहीं सम्भाल सकती । वह बहुत जल्द ही रमजान अली रंगरेज से बाकायदा निकाह कर रही है । हां वह उसे उसके परिवार के पोषण के लिए यह तांगा और घोड़ा सदा-सदा के लिए दे रही है बशर्ते वह किसी तरह की कोई चर्चा न करे । उसके मुंह से कोई भी ओछी बात न कहे ।

तब मेहताब पीरअली के सामने अंधेरा ही अंधेरा छा गया जैसे जैसे मनमन न होगा अंधेरा हो ।

उसने टूटे व दुखी से दिल से फिर यह सौदा कर लिया ।

६

आत्मीय अजनबी

मिस प्रमिला से मेरी पहली भेंट बम्बई के उपनगर सान्ताकुंज स्थित सुरग रेस्त्रां में हुई थी। उसका रंग गोरा, कद लम्बा, होंठ कुछ कम आकर्षक। मुख पर काफी गंभीरता। वह मेरे एक व्यापारी दोस्त गोपी के साथ थी। गोपी ने मुझे देखते ही बैठने का संकेत किया और मेरा परिचय प्रमिला को देते हुए कहा, "आप हैं हेमन्तकुमार, हिन्दी के जाने माने लेखक। आजकल बम्बई में फिल्मी कहानियां लिखते हैं।"...फिर वह प्रमिला की ओर मुखातिब होकर बोला, 'आप मिस प्रमिला, एक विलायती फर्म में रिसेप्शनिस्ट। स्वागत और सम्मान करने में अत्यन्त ही पटु। मैंने उसे मधुर मुस्कान के साथ नमस्कार किया। उसने प्रत्युत्तर मे आधा नमस्कार किया। वह मुझसे बहुत कम बोली। मैंने कई बार ऐसी चर्चा की कि जिसमें सबकी रुचि हो सकती है पर उसने कोई दिलचस्पी नहीं दिखायी। हर प्रश्न का बहुत ही छोटा और बहुत ही संयत जवाब दिया उसने। फिर वह चाय पीकर नमस्ते करके चली गयी, यह कहती हुई कि मुझे एक जरूरी काम से जाना है।

उसके जाने के बाद मैंने गोपी से कहा, 'क्या ऐसी रूखी लड़की से फ्रेंडशिप बनाये रखते हो? बड़ी नीरस और घमंडी लगती है।"

"हां हेमन्त, मैं जितना इसके पीछे पीछे फिरता हूं, यह उतनी ही पेक्षा करती है।"

"फिर मोती मारो ना इसे। अब संसार में पैसों वालों से प्रेम करने वाली लड़कियों की कमी नहीं।" यदि इससे प्रेम हो भी गया तो अधिक दिन तक चलने वाला नहीं। शादी भी हो गयी तो उम्र भर इसके नाज उठाते रहोगे।" फिर मैंने रुक कर कहा, "आदमी वैसे कभी भी बूढ़ा नहीं होता है लेकिन वह औरत के नाज उठाने लगे तो मेरी राय में असमय ही बूढ़ा हो जाता है।"

वह मेरी उपहासमिश्रित बात से चिढ़ गया। उसके चेहरे पर विषाद की गहरी रेखायें छा गयीं। वह चाय के प्याले से खेलता हुआ आहिस्ते आहिस्ते बोला, "तुम मुझसे मजाक कर रहे हो। शायद तुम्हें मालूम नहीं कि मैंने इसके प्रेम में क्या-क्या तकलीफें सही हैं। इस पर भी कोई अच्छी और सतोष जनक प्रगति नहीं हुई। पता नहीं, यह क्यों मुझसे एक विचित्र सी दूरी रखना चाहती है।"

"तुम केवल व्यापारी हो इसलिए वह तुम्हें अधिक तरजीह नहीं देती, वर्ना वह तुम्हारे पीछे पीछे घूमती। वह बंगाली लड़की है न, पूंजी से अधिक कला की अर्चना करती है। व्यापारी से अधिक कलाकार को पसंद करती है। तुम्हें कवि या लेखक बनना चाहिए।" मैंने उपदेशक की तरह कहा।

"नहीं! बात यह नहीं है।" उसने अपने शब्दों पर जोर देकर कहा, "इस लड़की की साइकोलॉजी भी कुछ अजीब है। नौकरी पेशा है पर उस वातावरण से नितान्त पृथक। इसका कोई साथ मित्र नहीं। कोई विशेष घरना नहीं। एकदम अकेली पर इसमें एक अजीब आकर्षण है। इसकी आंखों में अपनेपन का एक दर्द सा तैरा करता है।" और फिर कितनी सुन्दर है ?"

मेज के समीप बैठे लोगों का ध्यान हमारी आकर्षित होने लग गया था। यह प्रेम और लड़की शब्द आजकल विस्फुक से कम नहीं। मैंने उसे धीमे से कहा, "यहां से चलना चाहिए। यह गुफ्तगू यहां के लिए नहीं।"

हम दोनों बाहर आये। कपड़े की दूकान पर कुछ लड़कियां खड़ी थीं। एक लड़की केवल फाक में बड़ी भद्दी लग रही थी क्योंकि उसका शरीर स्थूल था। एक लड़का एक क्रिश्चियन लड़की से खड़ा हंस हंस के बातें कर रहा था। मैंने उस लड़की को गौर से देखा। फिल्म में रहते रहते प्रत्येक वस्तु को फिल्मी दृष्टिकोण से देखने का मेरा स्वभाव सा बन गया था। मैंने तुरन्त गोपी से कहा, "यह क्रिश्चियन लड़की पर्दे पर खूब जमेगी। इसके नाक-नक्शा बहुत अच्छे हैं। रंग सांवला है पर स्क्रीन ब्यूटी कमाल की है।"

मेरी बात उसे रुचिकर नहीं लगी। वह तुनक कर बोला, "गोली मार इस लड़की को। तुम मुझे प्रमिला को प्राप्त करने का उपाय बतलाओ। सच कहता हूं कि वह चाहे तो मैं इतने विरोधों के बावजूद भी उससे विवाह कर सकता हूं।"

"फिर तुमने उसके भाई से बातचीत क्यों नहीं की ?" मैंने नया प्रस्ताव रखा।

"मैं उसके भाई के पास भी गया था। उसके भाई ने मुझे चाय पिलाकर कहा कि यह उसका जातीय मामला है। मैं इसमें कुछ भी दखल नहीं दे सकता।"

"अच्छा मैं ट्राई करूंगा।" मैंने उसे आश्वासन दिया और मैंने प्रणय सफलता के कई दुस्साहसिक किस्से सुनाकर उसे यह विश्वास दे दिया कि मैं तुम्हारे काम को पूरा करवा दूंगा क्योंकि तुम मेरे आत्मीय मित्र हो। उसे मेरी बातों से असीम धैर्य मिला और मैंने उसके मुख पर उत्साह और प्रसन्नता की रेखाएं देखीं।

उसके दूसरे दिन ही प्रमिला मुझे संयोग से बम्बई के चर्चगेट पर स्थित "नेपाली" रेस्त्रां में मिल गयी। वह अकेली थी। मैं मुस्कराता पास गया। उसने मेरी ओर इस तरह देखा जैसे वह मुझे

जानती ही नहीं है पर मैंने उसे नमस्कार कर ही दिया, "गुड नून मिस प्रमिला।"

उसने अपनी पलकें उठायीं और वह सरसरी नज़र फेंक कर बोली, 'बैठिए।"

मैंने बात का सिलसिला बनाने की गरज से इधर उधर देखकर पूछा, "क्या आप ऑफिस नहीं गयी ?"

"गयी थी, जल्दी लौट आयी।"

"क्यों ?"

उसने मेरी ओर एकदम तेज दृष्टि से देखा और वह कुछ रूखे स्वर में बोली, "यह मेरा व्यक्तिगत मामला है। आप कॉफी पीना चाहते हैं तो पी सकते हैं वर्ना मुझे अकेली छोड़ दीजिए।" उसकी मुद्रा ऐसी कठोर हो गयी जैसे वह मेरे मुख पर तमाचा जड़ने वाली हो। मैं हतप्रभ सा उसे देखता रहा। वह कॉफी पीती हुई जैसे अपने आप से बोल रही थी, 'आपके मित्र भी परेशान करते हैं और आप भी। मेरी समझ में नहीं आता कि आप वह सभी कुछ क्यों करना चाहते हैं जो सम्भव नहीं है। मैं आप से स्पष्ट रूप से बता देना चाहती हूँ कि मुझे आप और आपके मित्र में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं है।"

मुझे बड़ा अपमान प्रतीत हुआ। तनिक तिक्त स्वर में बोला, "आप हृदय की विवशताओं को नहीं जानती। प्रेम प्राणी को बहुत ही दीन बना देता है। गोपी आपसे प्रेम करता है।"

"प्रेम ?" वह चौंक पड़ी, 'मैं उससे नहीं करती हूँ। हम दोनों में कैसे समन्वय हो सकता है।" उसकी आँखें आँखें न रह कर अग्नि-पिंड हो गयी थीं।

"आप उससे इस तरह क्यों दूर रहती हैं ? क्या है ?' मैंने तनिक सहमते हुए प्रश्न किया क्योंकि

माध्यम से उससे थोड़ी देर उलझ कर कुछ सन्निकटता प्राप्त करना चाहता था।

"मैं कुछ नहीं जानती। सिर्फ इतना जानती हूं कि वह मुझे प्रभावित नहीं करते हैं।" उसने अत्यन्त स्पष्ट से कहा। फिर उसने अपनी दृष्टि मेज पर लगादी।

मैं झुंझला उठा, "आखिर कभी न कभी आप किसी से विवाह करेंगे ही? कभी न कभी आप किसी के घर की ...।"

वह बीच में ही दृढ़ता से बोली, "यह मेरा अपना निजी मामला है कि मैं किससे प्रेम करूंगी और मैं कब अपना घर बसाऊंगी? हां, इतना जरूर सोच लिया है कि मैं आपके दोस्त से किसी तरह का संबंध नहीं रख सकती। मैं उसके साथ एडजेस्ट नहीं हो सकती।"

मुझे ऐसा लगा कि यह विरोध कुछ अधिक ठोस विरोध नहीं है। बहुत ही खोखला सा लगा। प्रमिला सिर्फ बहाने बना रही है। क्योंकि मैंने उसके चेहरे पर एक दर्द को तैरते हुए पाया जो कुछ और ही कह रहा था।

कुछ देर मैं उसके समक्ष बैठा रहा। वह कॉफी पीती रही। निस्पंद और अचल। फिर मैं वहां से चला आया। लेकिन मैंने ये बातें गोपी को नहीं बतायीं। यदि यह सब उसको कह देता तो उसे काफी कष्ट होता। दिन बीतते जा रहे थे। वह मुझे बार बार पूछता। मैं उसे झूठे आश्वासन दे देता। वह मेरे आश्वासनों से आशावादी बनता गया जैसे उसके शरीर में प्राण लौट रहे हैं।

मैं बड़ा धर्म संकट में पड़ा। मैंने एक चालाकी और की कि गोपी को यह आदेश भी दे दिया कि वह प्रमिला से इधर कतई न मिले। वह नहीं मिला। मैं यदाकदा प्रमिला से मिलता रहता था पर उसके जरा भी अन्तर नहीं आया। उल्टी उसकी रुखाई और कटुता

बढ़ती गयी । मैंने एक दो फिल्मी दोस्तों से भी उसकी चर्चा की । उन्होंने अपनी दृष्टि कोण से कहा कि इसे नायिका बनाओ । हीरोइन का लालच अच्छी से अच्छी बिल्डिंग की नींव हिला सकता है । यानि उनकी भाषा में एक युवती एक बिल्डिंग हुई ।

साहस करके मैं एक दिन संध्या को प्रमिला के निवास स्थान पर आ पहुंचा । माहिम में उसके भाई ने दो कमरों का साधारण फ्लैट ले रखा था । मैं वहां पहुंचा । फ्लैट की सजावट और सामान देखकर मैं चकित सा बैठा रहा । दीवारों पर दो तैल चित्र । लेटेस्ट डिजायन के पर्दे । एक अल-सेशियन कुत्ता । इन सब ठाट बाट को देखकर मैंने सोच लिया कि गोपी इस लड़की के साथ कभी भी खुश नहीं रह सकता । केवल पैसा सुख का आधार नहीं । गद्दियों में रहने वाला गोपी इस सुसंस्कृत लड़की के संग एडजेस्ट नहीं कर सकता । मैंने तुरन्त यह निर्णय भी कर लिया कि मैं यहां से विवाह की चर्चा कदापि नहीं करूंगा, क्योंकि ये लोग अति आधुनिक व एडवांस्ड हैं । अत्यन्त कला प्रिय हैं । और वह निरा व्यापारी । किन्तु सही यही था कि मैं नहीं चाहता था कि ऐसी असाधारण और अनुपम लड़की उसकी चहेता बने । एक चोर मेरे मन में भी उत्पन्न हो गया ।

थोड़ी देर में उसका बड़ा भाई आ गया । मैंने उठ कर प्रणाम किया । उसने बैठने का संकेत किया । वह धोती-कुर्ता पहने हुए था और उसके हाथ में कोई उपन्यास था । उसने उपन्यास बड़े इतमिनान से रखा और वह बोला, 'कहिए, यहां कैसे आना हुआ ?"

मुझे कोई प्रश्न नहीं सूझा । मैं उसकी ओर अबोध बालक की तरह देखता रहा ।

उसने गंभीरता से कहा, "कहिए, कोई खास बात है ।"

मैंने कहा, "मैं प्रमिला जी से.......... ।"

वह धीमता से बोला, "वह अभी नहीं आयी हैं । आप कल उसके दफ्तर चले आइए । वह वहां पर निश्चिंतरूप से मिलती है ।

मैंने कहा, "जी ठीक है ।"

'चाय पीजिएगा ?"

"नो, थैंक्स !' मैं चला आया ।

मैं अभी थोड़ी दूर गया ही था कि मुझे टैक्सी में प्रमिला आती हुई दिखाई पड़ी । मुझे देखकर उसने अपनी दृष्टि घुमाली । मुझे बड़ा क्रोध आया पर मैं अपना क्रोध जहर के घूंट की तरह पी गया ।

उसी रात गोपी आ धमका । आते ही उसने प्रश्नों की झड़ी लगादी । मैं नितान्त मौन रहा । जब वह प्रश्न करते करते थक गया तब मैंने उससे कहा, "आज मैं भी तुम्हें यह राय दूंगा कि तुम प्रमिला का विचार अपने हृदय से निकाल दो । उसका जीवन स्तर और तुम्हारा जीवन स्तर सर्वथा भिन्न है । जीवन में रूपासक्ति से अधिक मानसिक सामजस्य होना चाहिए । वह बिलकुल अलग ढंग से पली है । तुम लोग कभी भी एक साथ खुश नहीं रह सकते ।'

गोपी ने खीझते हुए कहा, "मुझे तुम से इसी उत्तर की आशा थी ।" वह एकदम निराश हो गया । मुझे पीड़ा भी हुई कि गोपी को प्रमिला को दूसरी आम और चालू लड़कियों की तरह नहीं समझना चाहिए । वह ऐसी लड़की नहीं है जो केवल पैसों वालों की ओर ही आकर्षित होती हो । वह निहायत एक सुशिक्षित व मर्यादित युवती है जो जीवन को भावुकता के आधार पर नहीं, विवेक की दृष्टि से देखती है । और मैंने गोपी को उपदेश सा दिया, "तुम्हारी शराफत इसी में ही है कि तुम उसका विचार अपने दिमाग से एकदम निकाल दो वर्ना वह शरीफ लड़की कभी तुम्हें भरे बाजार में जलील कर देगी । वह एक भली और खानदानी लड़की है ।

"खानदानी लड़की ?" उसने घृणा से इस वाक्य को दोहराया, मैं [illegible] हैं, इन नौकरी पेशा छोकरियों को । मैं उस पर मरने लगा तो [illegible] लगी ।" वह चिढ़ सा गया ।

मैंने उसकी इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया किन्तु इसके बाद मैंने भी प्रमिला को पाने का नया तरीका निकाला। अब वह मुझे जब कभी मिलती है तो मैं उसे घूर कर देखता नहीं। बात भी करने की चेष्टा नहीं करता। उसका फल यह निकला कि धीरे धीरे वह मुझसे कभी कभी दो चार बातें पूछ लिया करती थी जिसका संबंध फिल्मी दुनिया से होता था। एक दिन उसने मेरे साथ चाय पी थी और चाय पीते पीते उसने मुझसे नम्र निवेदन किया, "आप एक शरीफ आदमी हैं। मुझे लगता है कि आपकी गोपी बाबू से मित्रता अनायास ही हुई है क्योंकि वे जरा से सभ्य मुसस्कृत नहीं हैं। बस मुझे विद्या भवन के एक आयोजन में मिल गये। बस, छाया की तरह मेरे पीछे चिपक गये। कहने लगे– मेरे साथ डिनर लेना ही पड़ेगा! तब मुझे उन्हें झांसा देकर बीच में ही भागना पड़ा। आप ही बताइए, यह कहां की शराफत है।" मुझे प्रमिला से पूरी हमदर्दी हुई। मैं उसी रात गोपी के पास गया और शराफत एवं इन्सानियत पर उसे एक पूरा गर्मागर्म भाषण दे आया। अन्त में मैंने उसे सावधान भी किया, "अगर अब की बार तुमने कोई ओछी और बीचतापूर्ण हरकत की तो मैं तुम्हें जरूर कुछ कड़ी सिखा दूंगा।" गोपी निरुत्तर रहा। वह मेरी ओर देखकर मुस्कराया जैसे मेरे इस परिवर्तन पर उसे महा आश्चर्य हो रहा है। साथ ही मुझे भी लगा कि मेरे हृदय में उगा यह चोर अब बहुत बड़ा हो गया है।

मुझे ऐसा लग रहा था कि यदि मैं इसी तरह उससे पेश आता रहा तो एक दिन वह मुझे जरूर प्रेम करने लगेगी। और मेरी कल्पना में प्रमिला को लेकर कई तरह के प्रेम दृश्य घूम गये।··· और अप्रत्याशित मैं उदास भी हो गया। अपने को अपराधी सा अनुभव करने लगा। मित्रभाव की बात बार बार याद आती थी। पर प्रमिला का सम्मोह छोड़ना मेरे लिए अब दुष्कर हो रहा था। तब मैंने अपने मन को इस तरह समझाया कि प्रमिला गोपी से घृणा करती है। वह उसे अपने प्रेम का शतांश भी

देने को तैयार नहीं। फिर मैं उसके प्रेम को प्राप्त कर लूं तो इसमें कौनसा अपराध है?...... वह किसी और से प्रेम करे, इससे बहतर तो यही रहेगा कि वह मुझसे ही प्रेम करे आखिर मैं उसका दोस्त हूं। यह अधिक भावुकता का युग नहीं है। एक नया आनन्द मेरे अन्तराल की बुर्जियों पर गहरी आवाजें लगाता रहा। मैंने गोपी से मिलना जुलना बंद कर दिया। उन स्थानों पर मैंने उठना बैठना और जाना ही छोड़ दिया जहां मेरा गोपी से मिलने का अंदेशा बना रहता था। कभी २ वह आत्मीय मिल भी जाता तो मैं उससे अजनबी सा व्यवहार करता था। वह मेरे इस बर्ताव से दुखी हो जाता था पर मैं भी विवश था। मेरे लिखने पढ़ने में भी नयी ताजगी आ गयी थी। मुझे लगता कि प्रेम वास्तव में सबसे बड़ी शक्ति, प्रेरणा और आनन्द है।

एक सप्ताह बीत गया।

मुझे मेरे एक लखपति मित्र रामप्रसाद ने पीने का आमन्त्रण दिया। वह एक कपड़ा मिल का मालिक था। एक बार उसने मेरे कहने पर मेरे प्रोड्यूसर को कुछ फाइनेन्स भी किया था। बड़ा मस्तमौला था। मोटर में बैठने के पहले उसने मुझे एक रेस्त्र में हाथ में जल देकर सौगन्ध दिलायी कि जहां हम अभी जायेंगे उस स्थान और वहां की गतिविधि का तुम मरते दम तक कभी भी जिक्र नहीं करोगे और यदि करोगे तो अपने मित्र रामप्रसाद का रक्त पीओगे खाओ सौगन्ध।"

मैंने सौगन्ध खाली। हम दोनों कार में बैठ कर चले। वह मुझे रास्ते में बताता रहा कि उसने कोलाबा में एक फ्लैट ले रखा है जहां उसने एक सुन्दर लड़की को पांच सौ रुपये माहवार में बांध रखा है। रात को वह कभी कभी उसके पास जाता है और घण्टे दो घण्टे रहकर वापस आ जाता है। यह काम वह अपने बाप से बिलकुल छुप कर करता है।

कार, गेट वे ऑफ इण्डिया के पास से होकर गुजर रही थी। खड़े जहाजों में बत्तियां जल रही थीं। लोग सागर तीरे बैठे हुए

थे। मैं उन पर दृष्टि फेंकता हुआ सोच रहा था कि एक दिन मैं भी प्रमिला को लेकर यहां पर आऊंगा, किनारे बैठूंगा, किश्ती में सैर करूंगा। प्रमिला–प्रमिला, प्रमिला। मैं आनन्द के अतिरेक में उत्तेजित हो गया। वासना के अदृश्य घन मेरे मस्तिष्क पर छाने लगे। मैंने अपने मित्र के कान के पास अपना मुंह लेजा कर कहा, "मैं भी आजकल एक लड़की के प्रेम में फंस गया हूं। इतनी सरल और सुन्दर लड़की बम्बई में नहीं मिलेगी। तुम देखोगे तो उसके चेहरे पर चमकती हुई पवित्रता पर मुग्ध हो जाओगे।"

"कब दिखा रहे हो।"

"जरूर दिखाऊंगा, मौका आने दो पर तुम जरा अपनी इस लड़की के बारे में बताओ।"

वह निहायत शरीफ सी लगती है। वह यहां संभवतः अकेली है और शेष परिवार इन्दौर में है। उसके कुल मिला कर परिवार में चौदह प्राणी हैं जिनमें उससे छोटे भाई बहिन हैं। सब पढ़ रहे हैं। बाप का देहान्त हो चुका है। बेचारी बड़ी मजबूर है। यदि मुझे मेरे पिताजी का भय नहीं होता तो मैं उससे चुपचुप विवाह कर लेता। पर उसका कहना है कि वह विवाह करके अपने छोटे भाई-बहिनों के जीवन को नाश नहीं कर सकती।"

कार एक अच्छी बिल्डिंग के आगे रुकी। हम दोनों उतरे। उसने कॉल बैल बजायी। नौकरानी ने दरवाजा खोला। हम लोग एक सुसज्जित ड्राइंग रूम में आये। एक खूबसूरत युवती की पीठ मुझे दिखायी दी। वह मैगज़ीन पढ़ रही थी।

मेरे दोस्त ने कहा, "प्रमो !"

उसने गर्दन घुमायी। जब गर्दन घुमायी तब उसके ओठों पर मुस्कान थी पर जैसे ही उसने मुझे देखा वैसे ही वह स्तब्ध सी खड़ी रह

गयी। वह मेरी ओर केवल देखती रही। मुझे लगा कि जड़ता उसके जीवन के स्पन्दनों पर क्षण भर में छा जायेगी और वह निष्प्राण होकर अभी गिर पड़ेगी। सो मैंने अपने अन्तस के झंझा को अत्यन्त चतुराई से दबाकर कहा, "हलो, गुड नाइट।

"नाइट!" उसने अपने आपको बहुत संभालते हुए कहा। "मेरे मुँह से अगिला शब्द निकलने वाला था पर मैंने उसे रोक लिया।

मेरे मित्र रामप्रसाद ने बैठते हुए कहा, यह मेरा जिगरी दोस्त है। इसमें मैं कुछ नहीं छुपाता और इसको हाजमा शक्ति भी बड़ी तेज है। इसके पेट में बड़ी से बड़ी बात बड़े आराम से बिना किसी गड़बड़ी के रह सकती है। कभी भी बाहर नहीं आती। बहुत विश्वासी है!"

उसने बोझिल वातावरण को उपहास मिश्रित करने की चेष्टा की पर हम दोनों एक अहश्य मुर्दपन के बीच दब गये थे और सोच रहे थे कि चाहे कोई कितना ही जोर लगाते पर हमारे दिलों का यह मुर्दापन अभी नहीं मिट सकता।

"तुम लोग चुप क्यों हो?" रामप्रसाद ने पूछा।

"नहीं तो?' मैंने चौंक कर कहा, प्रभोजी आपके बारे में मुझे राम ने सब कुछ बता दिया है। मुझे आपसे पूरी हमदर्दी है।"

"शुक्रिया।" उसने इतना ही कहा और वह भीतर जाने लगी। मेरे दोस्त ने उसे रोका पर वह नहीं रुकी। भीतर जाते जाते बोली, "एक दूसरे के बारे में सभी कुछ जानने के बाद क्या शेष रह जाता है, राम बाबू! अधिक ज्ञेयता अच्छी नहीं होती। अज्ञेयता ही श्रेष्ठ है।" और वह भीतर चली गयी। राम भी चला गया। थोड़ी देर बाद में उसने आकर कहा, "उसकी तबीयत यकायक खराब हो गयी है। आओ, जल्दी से कहीं पीकर कोई अंग्रेजी फिल्म देखें। फिर कभी साथ बैठेंगे। भाई ··रना" और हम नीचे उतर आये।

●

७

जिन्दगी और संस्कार

शोभा झूला झूल रही थी। एक और लड़की भी झूले में बैठी थी। शोभा खड़ी हुई हिलोरे दे रही थी। झूला एक सपाटे में धरती की ओर, और दूसरे ही क्षण बादलों के चांद की ओर उड़ा चला जाता था। हवा में उड़ता गुलाबी आंचल शोभा के रूप को निखारे दे रहा था। मुझे लगा, जैसे कोई परी गगन से अपने पंख फैला कर उतर रही है।

मैंने छात्र-जीवन में कुछ काव्य-पंक्तियां लिखी थीं। इस दृश्य को देख कर मेरे मन में कविता ने करवट ली। मैं भावाभिभूत, उसे देखता ही रहा।

झूला रुका। शोभा उतरी और मेरे पास आकर कृत्रिम रोष में बोली, 'बड़े बेशर्म हो, झूला झूलती औरतों के पास आकर क्यों खड़े हो गये?'

मैंने अपनी प्यासी दृष्टि उसके चेहरे पर जमा दी, 'केवल तुम्हें देखने के लिए। सच शोभा, तुम्हें देख कर मुझे ऐसा लगता है कि कोई अप्सरा इन्द्र से रूठ कर मृत्यु लोक में आ गयी है, मुझे प्यार से भिगोने के लिये।'

शोभा के चेहरे की कृत्रिमता पलक मारते उड़ गयी। चेहरा सचमुच कठोर हो गया। वह हवा की तरह घर में प्रवेश कर गयी। मैं अवाक् उसके पीछे हो लिया।

वह कमरे में जाकर रोने लगी।

मैंने क्षमा मांगते हुए कहा, 'शोभा, तुम बुरा मान गयी!'

'बात ही ऐसी थी। तुममें यह सब कहने का साहस कैसे हुआ? तुम्हारे मन में ऐसी खोट क्यों है?'

मैं चुप होगया। मुझसे उत्तर देते नहीं बना। कुछ क्षण विमूढ़-सा खड़ा रहा, बाद में उससे पुनः क्षमा मांग कर चला आया। क्योंकि ताड़ना बहुत ही अप्रत्याशित व मेरी आशा के विपरीत हुआ था।

रात को मैं चुप रहा। मैंने उसके बढ़िया खाने की आज सदा की तरह जरा भी प्रशंसा नहीं की। सेठजी मुझसे प्रश्न पर प्रश्न करते रहे। उनका उत्तर मैं केवल 'हां-ना' में देता रहा। मुझे किसी में भी रुचि नहीं थी। बार-बार यही सोचता था आखिर, शोभा ने ऐसा क्यों कहा?

खाना खाकर मैं नीचे आकर सो गया। सेठजी मेरे मौसेरे-भाई थे और शोभा मेरी भाभी।

बादलों के कारण गहरा अंधेरा छाया हुआ था। उस अंधेरे में झूले का वह पेड़ प्रेतात्मा की छाया सा लग रहा था और रेत का टीला भयानक डरावना धब्बा। धीरे से किवाड़ खोलकर मैं बाहर निकल आया।

शहर के बाहर रेगिस्तान; आकाश ठण्डा और रेत भी ठण्डी।

मैं सबसे ऊंचे टीले की ओर बढ़ गया। पांव धीरे-धीरे उठ रहे थे। मुझे इस बात का भय था कि कहीं शोभा सेठजी को यह सब कह न दे कि मेरी अधिक उदारता का आपका भाई नाजायज फायदा उठाना चाहता है। इस विचार से मैं कांप गया। इस विचार ने मुझे निर्जीव सा कर दिया और मुझमें एक गहरी थकान से टूटे हुए इन्सान की तरह शिथिलता आ गयी। मैं धीरे धीरे बढ रहा था। अभी मैं टीले तक पहुँचा ही था, कि मुझे सांप ने डस लिया।

अन्धेरे में मैंने रेंगते हुए सांप को पहचान लिया।

मैं घबरा उठा। हवा की तरह भागा। घर में घुसकर मैं जोर

से चीखा—सेठजी...सेठजी,...मुझे साँप ने काट लिया !'

देखते-देखते सारा घर और मुहल्ला इकट्ठा हो गया। लोग लालटेन लेकर साँप को खोजने आ गये। मैंने उन लोगों की सहानुभूति पाने के लिए यह नहीं बताया कि साँप ने मुझे टीले पर काटा है। वे यह भी कह सकते थे कि क्यों मरा था उस टीले पर ? कौन सा वहाँ धन गड़ा था ?... इसलिए मैंने सर्वथा मिथ्या-भाषण किया कि मुझे आँगन की नाली पर साँप ने काटा है। सेठजी के घर में साँप ने काटा था, इसलिए उन्होंने अपनी गहरी जिम्मेदारी समझी। मुझे तुरन्त ताँगे में बिठा कर ओझा के पास ले गये।

लगभग तीन दिन के बाद मेरी स्थिति कुछ सामान्य हुई। इन तीन दिनों में भाभी ने मेरी खूब सेवा की। उसने दिन को दिन और रात को रात नहीं समझा। एक वफादार नर्स की तरह वह मेरे पलंग के पास बैठी रहती थी।

चौथे दिन सुबह ही सुबह सेठजी मेरे पास आये। सेठजी की आयु पैंतालीस वर्ष की थी और भाभी की पच्चीस। घर में दूसरा कोई नहीं था। दोनों मियाँ-बीवी, बाह्य जगत से अत्यन्त अल्प सम्बन्ध रखे हुए थे। मैं समझता हूँ कि अगर उनकी खानदानी दुकान नहीं होती तो सेठजी किसी से बोलते भी नहीं।

'कैसे हो ?' उन्होंने पूछा।

'अच्छा हूँ।' मैंने एहसान से दब कर, नीची नजर करके कहा, 'यह सब आपकी कृपा है।'

'मेरी ?' वह चौंक कर बोले, 'नहीं-नहीं ! यह सब तुम्हारी भाभी की सेवा का फल है।...उमेश ! अपनी भाभी का शुक्रिया अदा करो।' मैंने भी उसे हार्दिक धन्यवाद दिया।

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। मेरी आँखों में करुणा उभर आई और साथ रोकने पर भी वह बह चली–पिघल कर !

"रोता क्यों है पगले ? तेरी भाभी मौत के मुंह से भी वापिस लौट आई !

"सेठजी, आप कितने महान हैं !" मैंने रुंधे स्वर में कहा।

"फिर तुम मेरी तारीफ करने लगे ! तारीफ करो अपनी भाभी की। उसने तुम्हें जीवन दिया है।"

मैं विभोर हो गया। अश्रु रोके नहीं रुके। शायद मैं अपने पश्चात्ताप की आग में जल रहा था, क्योंकि तत्क्षण मुझे अपना झूठ बोलना याद हो आया और याद हो आयी अपनी नीच प्रकृति कि मैंने भाभी को प्रेयसि के रूप में देखने का अपराध किया।

सेठजी चले गये। यह सही था इधर कुछ ही दिनों में इनका अलगाव तेजी से बढ़ा। क्यों, मैं नहीं जान सका किन्तु सेठजी का व्यवहार आजकल बदल सा रहा था।

दोपहर में गहरी नींद सोया हुआ था। भाभी अपने काम में तन्मय थी। सेठजी की आज साप्ताहिक छुट्टी थी, इसलिए वह बैठक में बैठे अपने बही-खातों को ठीक कर रहे थे। मैंने एक सपना देखा– चारों ओर रेगिस्तान ही रेगिस्तान है। दूर–दूर तक कोई भी पेड़–पौधा नजर नहीं आ रहा। केवल शून्यता और नीरवता। सहसा मुझे शोभा दिखाई देती है। वह बहुत ही सलोनी और आकर्षक लग रही है। उसके मृदुल अधरों पर मुस्कान थिरक रही हैं। उसके पद चिन्ह निरन्तर चलने वाले यात्री की दूर दूर तक दिखाई दे रहे हैं। दूरागत प्रेम-गीत की ध्वनि उस वातावरण में मादकता भर रही है। मैं विभोर हो उठता हूँ। मन–प्राण एक अनजाने रोमांच से भर आता है। उत्तेजना के कारण कुछ बोल नहीं पाता। शब्द गले में ही अटक कर रह जाते हैं।

शोभा कहती हैं, "आओ, मेरे पास आओ। तुम मुझे प्यार करते हो !"

"हाँ।"

"भाभी, मैं तुम्हें इस वासती पवनों से शून्य और धूल धूसरित रेगिस्तान से उठाकर स्वर्ग में ले चलती हूँ—क्षितिज के उस पार, जहाँ केवल हम और तुम ही होंगे।"

मैं मुग्ध सा हो गया। मैंने भाभी का कोमल हाथ अपने हाथ में ले लिये। उसके संगमरमर से हाथ पर मेरी उंगलियां दौड़ती रहीं।

"मैं अब उड़ती हूँ। मेरे हाथों को मजबूती से पकड़े रखना। बहुत ही विकट और विपदा भरा रास्ता है। बीहड़ वनों और अथाह समुद्रों वाला।"

"मैं तुम्हारा हाथ नहीं छोड़ूंगा।"

शोभा नील गगन में उड़ चली। उसकी गति तीव्र से तीव्रतम हो गयी। उसने मुझे सावधान किया, "रमेश, प्यार के बीच व्यवधान डालने वाला पिशाच भयानक झंझा के साथ आ रहा है।

"तुम परवाह न करो।"

हम दोनों उड़ते रहे। झंझा इतना भयावह था कि हमारा साथ नहीं निभ सका। मैं गिर गया। शोभा से बिछुड़ गया। मैंने देखा, मेरे चारों ओर रेगिस्तान ही रेगिस्तान है। मुझे बड़े जोर की प्यास लगी। गला सूखने लगा। आत्मा कलपने लगी। मैंने पागलों की तरह चीख कर पुकारा, "शोभा···शोभा···!"

कोई प्रत्युत्तर नहीं आया। मैं पुनः गिर गया। धीरे-धीरे मुझ पर रेत जमने लगी।

हठात् मेरी आँखें खुल गयीं। प्यास से मेरा गला सूख रहा था। मैंने पुकारा "भाभी !"

शोभा मेरे पास आयी।

"प्यास लगी है।"

भाभी ने पानी लाकर दिया। आज वह बहुत उदास थी। पलकों के सायों में व्यथा झलक रही थी।

मैंने पूछा, "आज बहुत उदास हो !"

"नहीं तो !"

"झूठ क्यों बोलती हो ?"

"झूठ तुम्हारे सामने क्यों बोलूंगी ?" उसने अपने स्वर को स्वाभाविक बनाने की पूरी चेष्टा की पर वह बन न पाया। दो बूंद आंसू ढुलक ही आये।

"क्या बात है ?" मैं विह्वल हो गया, "मुझे भी नहीं बताओगी, भाभी !

भाभी की भावुकता जाग पड़ी। उसने अपने आंसुओं से भरे मुंह को हाथों में छिपा लिया। मैंने कहा, "भाभी, जरूर तुम मेरी उस हरकत से अभी भी नाराज हो। मैं उसके लिए तुम्हारे चरणों में पड़कर क्षमा मांगता हूं। आदमी कभी–कभी बहुत ही गलत ढंग से सोच लेता है। मैंने भावावेश में तुम्हारे बारे में गलत सोच लिया था। न जाने क्यों, मुझे लगता रहा कि तुम्हारे मन में भी मेरे लिए प्यार का सागर लहरा रहा है। और तुम्हीं तो मेरे साथ घूमने चलती थीं, सिनेमा जाती थीं, रात को घंटों बैठकर मुझसे सभी तरह की चर्चायें करती थीं ! मेरे प्यार के किस्से सुनती थीं। आखिर वह सब क्या था, भाभी ? फिर, मेरे आने पर तुम में कुछ चैतन्य भी आ गया था। भाई साहब भी कहते थे, मौसी ने तुम्हें यहां भेजकर बहुत ही अच्छा काम किया है उमेश, इससे तुम्हारी पढ़ाई के साथ-साथ तुम्हारी भाभी का एकांत भी टूट जायगा। तुम्हारे आने के पहले यह पत्थर की मूरत की तरह मौन और निस्पंद रहती थी। इसे इन घर के धन्धों के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। खाया और सोया या किस्से–को लेकर बैठ गयी। अब वह सब खत्म हो गये हैं। अब तुम्हारी

भाभी एक श्मशान की तरह जीना सीख गई है ।""और भाभी तुम्हें याद है न, पूर्णिमा की रात हम दोनों छत पर आधी रात तक बैठे बैठे अपने परिचितों के प्यार के किस्से दोहराते रहे ! मैंने तुम्हें कई बार स्पर्श भी किया था । तुमने उसका कोई विरोध नहीं किया । उस दिन झूला झूलते हुए मैंने तुम्हें एक प्रेमिका के रूप में मान लिया । किन्तु तुम्हारे एक झटके ने मेरे भ्रम को धराशायी कर दिया । मैं ग्लानि और पश्चाताप में जलने लगा । मेरी इच्छा हुई कि मैं भाग जाऊं । मैं सचमुच बहुत कमीना और नीच हूँ । पर ईश्वर ने मुझे इसकी सजा दे दी । मुझे सांप ने काट लिया । अपने पाप का दंड भोग चुका हूँ । किन्तु फिर भी तुम मुझसे नाराज रहती हो, भाभी ! अपराध हो गया सो हो ही गया । मुझे क्षमा करो । मैंने तुम्हारी स्वच्छन्द मनोवृत्ति का बहुत ही गलत अर्थ लगा लिया था ।"

भाभी फफक पड़ी । अपने आँचल को मुंह में दबा कर वह अपने कमरे में चली गयी । मैं अप्रतिभ सा रह गया । विवश हुआ चुपचाप बिस्तरे पर पड़ा रहा । पिछली स्मृतियाँ जाग उठीं :

भैया मेरी मौसी का बेटा है । मेरी माँ वैसे भैया की मौसी जरूर हैं पर उम्र में उनसे बहुत छोटी हैं । मेरी पहली भाभी हैजे से चल बसी थी । वह निःसन्तान थी । लोगों ने भैया को पुनर्विवाह करने के लिए बहुत समझाया, कहा कि कुछ रुपयों का ही सवाल है पर घर तो बस जायगा, पर भैया नहीं माने । फिर एक दिन उन्होंने इस शहर से दूर एक गांव में जाकर अप्रत्याशित चुपचाप यह विवाह कर लिया । बड़ा नाटकीय विवाह हुआ था वह । यह भी सुना था कि भैयाने भाभी के तन का सौदा तीन-चार हजार में किया था । इस तरह ये भाभी आ गई । यह बेचारी गाय की तरह मूक रही । विद्रोह जैसे इसके रक्त में ही नहीं था । चुपचाप अत्याचार अन्याय सह सकती है । घुट-घुट कर मर सकती है । यह उसकी तासीर है या परिस्थितियों ने उसे ऐसा बना दिया है, मैं नहीं जानता ।

मैं पुनः उठा । सेठजी के पास गया । बोला, "सेठजी, आज भाभी बहुत उदास है, बड़ी देर से रो रही [illegible] ।"

सेठजी ने वहीं पर से अपनी तीखी दृष्टि उठायी। उनकी पुतलियां ऊपर की ओर उठी हुई थीं। चेहरे पर कठोरता छायी हुई थी। मैं उनकी उस दृष्टि का अर्थ नहीं समझा। स्तब्ध खड़ा रहा।

"वह मुझे कुछ बात बताती भी नहीं।" मैंने फिर कहा।

"फिर वह मुझे कैसे बता सकती है? जाओ और उसे मनाओ। उसे एक तुम ही खुश कर सकते हो। उसकी खुशियों का सागर तुम्हारी मुट्ठी में है।"

उनके स्वर का व्यंग अब मैं समझ गया। वहां से चला आया। मैं भाभी से नहीं मिला। क्या सेठ जी इसीलिए भाभी से नहीं बोलते? मेरा मन बोझिल हो गया।

रात, भाभी को बुखार आ गया—जोर का बुखार। मैं अपने आपको नहीं रोक सका। उसके कमरे में चला गया। मुझे देखते ही सेठजी उठ खड़े हुए। व्यंग-मिश्रित मुस्कान उनके सूखे छलनी जैसे खुरदर होंठों पर फैल गयी। अपनी मुद्रा को विचित्र तरह से हिला कर कहा, "आओ देखो, तुम्हारी भाभी तुम्हारे बिना तड़प रही है। इसे तुम्हारी सख्त जरूरत है; बैठो।"

मेरी इच्छा हुई कि इस दुष्ट के गालपर तड़ातड़ थप्पड़ मारूं, पर यह सम्भव नहीं था। मैंने अपने हृदय के आवेग को दबाकर कहा, "मैं डाक्टर को बुला कर लाता हूं।"

और, डाक्टर ने सारा निरीक्षण करके कहा, "डरने की कोई बात नहीं है। दो-तीन घण्टे में बुखार उतर जायगा।"

मैं वहां बैठा रहा। मैंने कई बार देखा—सेठजी चोर की तरह आते हैं और मुझे देखकर चले जाते हैं। उनकी बढ़ती-घटती छाया मुझे ...स्तित्व का भान करा रही थी और मैं वेदना में अभिभूत स... ...। यह परिवर्तन क्यों? जब मैंने अपने अन्तस के पाप को ...

लिया है, अपने आपको पवित्र कर लिया है फिर यह सन्देह और भ्रम क्यों ? मुझे सपना याद हो आया । भाभी के प्रति बुरे विचारों का फल रेगिस्तान में रोते हुए उमेश जैसा ही दुर्दान्त मिल सकता है । मैं तड़प उठा ।

कमरे में सन्नाटा था । उदासी जैसे मूर्त होकर कमरे में आकर बैठ गयी थी । कभी कभी बाहर कुत्ता भौंक लेता था । उसकी भूंक से मेरा अंग-अंग सिहर जाता था । आशंकाओं [illegible] दिल भर आता था । आत्मा कराह उठती थी ।

भाभी के ललाट पर पसीना आ रहा था । मैंने उसका पसीना पोंछा । तभी सेठजी आ गये । मैं उठ गया । मुझे उनकी सूरत तक से घृणा हो गयी थी । लग रहा था, कि कहीं देख लूंगा तो उल्टी हो जायगी । ओह ! इस बूढ़ी आत्मा में करुणा, प्रेम और दया की जगह घृणा, ईर्ष्या और दुष्टता भरी हुई है । निर्दयता की आग भड़क रही है । उस आग में यह बेजुबान जल मरेगी— खाक हो जायगी ।

उन्होंने मुझे जबरदस्ती बिठा दिया और उसी दुष्टता से बोले, "मेरे पास आने से इसका बुखार बढ़ जायेगा । तुम्हीं इसके पास बैठो ।"

मैं यन्त्रवत् सा बैठ गया । भाभी ने आंखें खोलीं । वह टूटते हुए स्वर में बोली, "सुनिए सेठजी ! उमेश, तुम अपने कमरे में जाओ ।"

मैं जाने लगा । सेठजी ने मुझे रोक दिया ।

"मुझे चलने दीजिये सेठजी, अब मुझे······ ।"

सेठ जी बीच में ही बोले, "मुझ बूढ़े को क्यों सताते हो ? मेरे पास रहने से तुम्हारा बुखार ठीक तो नहीं होगा, उल्टी मेरी तबियत और खराब हो जायेगी । मैं कोई उमेश की तरह जवान थोड़े ही हूं !" कह कर वह तुरन्त चले गये । दुःसह दुख भाभी के चेहरे पर छा गया । वह जैसे चीख सी पड़ी, "नहीं-नहीं, तुम मत जाओ । उमेश, इन्हें रोको न !"

[illegible] सेठजी उसके पास आ [illegible] सेठजी एक झटके में [illegible] उस दिन [illegible] "तुम नहीं [illegible] वह तुम नहीं सह सकती। [illegible] का रिश्ता केवल [illegible] कि आदमी [illegible] नहीं जानते तो मैं [illegible] है।

[illegible] उठ गयी। [illegible] नहीं पाते। उन्होंने [illegible] उसके हाथ की नसें उभर [illegible] ! अब तुम यहाँ से [illegible] है। मैं अपने प्यार में केवल [illegible] बाहर चले जाओ।" [illegible] "अब तो आपका कलेजा [illegible] —मन को शांति दीजिए।

[illegible] रोते रोते वह बोली, "मैं कितनी [illegible] नहीं दे देता।

[illegible]" सेठजी उसके पास पत्थर के बने [illegible]

[illegible] के बादल घिर आये। दूसरे ही दिन [illegible] चला आया।

८

शुचिता के घेरे

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

नलिनी गुस्से में भर उठी थी। 'तुम्हीं लोग अपने मर्दों को सिर पर चढ़ाती हो।"

हेमा उसके इस उपदेश को सुन कर भड़क उठी थी ! तुनक कर बोली थी, 'चल, हट, मुझे ज्ञान देने चली है। अरी जरा अपनी बगल में झांक। तुमसे तो मैं सात दर्जे अच्छी हूँ। तेरी तरह नंगी……"

नलिनी इससे आगे नहीं सुन सकी। तूफान की तरह अपने कमरे में आकर बिस्तर पर निढाल सी पड़ गयी। उसकी आंखें आंसुओं से भर आयीं और आंसू उसके कांपते अधरों पर रुक रुक कर उसे खट्टा स्वाद देने लगे। वह बड़ी देर तक निर्जीव सी बिस्तर पर पड़ी रही। अंत में उठकर वह वामन साठे के एक तैल चित्र के समक्ष आकर खड़ी हो गयी। वही सदा थिरकती निष्कलुष मुस्कान। साठे ने यह चित्र स्वयं बनाया था। सेल्फ पोर्ट्रेट। वह उसे देखती रही। अतीत फिर उभरा।

खट् खट् !

"कौन ?" साठे ने आराम कुर्सी पर लेटे लेटे ही पूछा। उसके हाथ में सिगरेट थी। कुर्सी के बायें हाथ पर ऐश्ट्रे पड़ा हुआ था। उसमें सिगरेटों के टुकड़ों का ढेर था। लगता था कि वह कई अर्से से लगातार सिगरेट पर सिगरेट पी रहा है।

दरवाजा बहुत आहिस्ते आहिस्ते नाटकीयता से खुला। एक अत्यन्त आकर्षक व गठित मांस पेशियों वाली युवती ने प्रवेश किया। उसके होंठ मुस्कान में भगे हुये थे। उसने आते ही कहा, "इतनी सिगरेट।" उसने उसके हाथ की सिगरेट छीन कर बुझा दी।

साठे ने उसका कोई विरोध नहीं किया। वह अपने आप में खोया हुआ सा बैठा रहा।

नलिनी उसकी ओर झुकी, साठे के मुंह से देशी शराब की बदबू …थी। नलिनी ने गुस्से में कहा, "आज तुमने फिर कन्ट्री पी। सचमुच

तुम शराब नहीं छोड़ सकते। एक दिन यह कम्बख्त तुम्हारी जान लेकर छोड़ेगी।"

इस बार साठे ने नलिनी का हाथ अपने हाथ में बड़ी मजबूती से पकड़ लिया। उसे अपने पास हत्थे पर खींच कर बिठाते हुए कहा, "इसे मैं नहीं छोड़ सकता। शराब मुझ में तीव्र अनुभूत सत्य को जन्माती है।

"लेकिन यह तीव्र अनुभूत सत्य तुम्हें मरणोन्मुख भी कर रहा है।"

"मेरे जीवन की तुम्हें इतनी चिन्ता?" साठे ने नलिनी को खींच देखा। आँखें चार हुईं। साठे को नलिनी की आँखों में आत्मीयता का अनन्त फैलाव नजर आया। इतने गहरे प्रेम का दर्शन हुआ कि वह सहम सा गया। शब्द मुँह के मुँह में रह गये।

"मैं जानती थी कि तुम मेरा निरादर करोगे। आखिर मैं तुम्हारी लगती भी क्या हूँ? मैं एक मॉडल गर्ल, गरीब और पीड़ित। तुम्हारे समक्ष ही नहीं, अनेक चित्रकारों के समक्ष अनावृत्त होकर खड़ी होने वाली, अपना अंग-प्रत्यंग देखने वाली पतित और जाहिल!' और वह दोनों हथेलियों में अपना मुँह छुपाकर रो पड़ी।

साठे का हृदय द्रवित हो गया। नयी सिगरेट सुलगाकर वह धीमे स्वर में बोला "नहीं-नहीं मुझे गलत मत समझो, मैंने तुम्हें बड़ी श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखा है लेकिन ये दुख मुझे छोड़ते ही नहीं। गांव से माँ का खत आया है-सुशीला किसी लड़के साथ घूमती रहती है। अवश्य उसकी अपरिपक्व उम्र उसे पथभ्रष्ट कर देगी। और मेरे पास इतना रुपया नहीं कि मैं उसे यहीं बुला लूँ।" उसने मुँह भाड़ा और सिगरेट का एक लम्बा कश खींचकर कहा, "मैं चिन्ताएं मरने से ही मर सकती हैं।"

"दुखों से छुटकारा पाने के लिए आत्म-हत्या कर लेना कोई वास्तविक मुक्ति नहीं। मुक्ति है-दुखों को दूर करके इन्सान की तरह जीवित रहना।"

साठे उठ खड़ा हुआ। खिड़की की राह अनंत आकाश दिखाई पड़ रहा था। दूर गगन में एक अकेला पक्षी उड़ रहा था। नीचे कोई मवाली पानी के लिए एक महिला से लड़ने लगा जिससे उसके कमरे की सुन्दरता मर गयी। उस महिला की बड़ी कर्कश आवाज थी। वह मराठी में बड़ी भद्दी-भद्दी गालियां दे रही थी।

"छोड़ो इन झंझटों को। तुम तैयार हो जाओ। हमें अपना काम करते रहना चाहिए। प्रतियोगिता की तैयारी करनी है।" और वह अपने रंग, ब्रश, कैनवास को सभालने लगा।

अपने कपड़े उतारती हुई नलिनी बोली, 'यह प्रतियोगिता तुम्हें शीर्ष चित्रकारों में स्थान दिलायेगी।

"यदि इस बार मेरी मान्यता नहीं हुई तो मैं सच कहता हूं कि मैं आत्महत्या कर लूंगा।"

"फिर वही बातें। निराशा को तुम्हें हृदय से निकाल देना चाहिए। इस बार तुम एक महान् चित्रकार बन जाओगे। सर्व प्रथम आओगे पर मुझे क्या दोगे ?" वह अनावृत होकर खड़ी हो गयी।

"जो तुम मांगोगी।"

"प्रॉमिज।"

"प्रॉमिज !"

"तुम्हारा यह चित्र 'आदिम गुहा में एक मां की ममता, सर्वश्रेष्ठ चित्र घोषित होगा।" और वह लेट गयी। उसने अपने पास एक कपड़े का बना हुआ बेबी सुला लिया। रंग उभारने लगे। साठे बाह्य जगत को विस्मृत करके अपनी कला में खो गया।

लगातार तीन घंटे काम। चित्र का खाका सजीव हो गया। नलिनी कॉफी बनाकर लायी ! कॉफी पीते-पीते नलिनी ने कहा, "मैं तुमसे विवाह

\ इर्ता हूँ।"

साठे ने कुछ पल कुछ भी नहीं कहा। वह कॉफी की चुस्कियाँ लेता रहा।

"तुमने मेरी बात का जवाब नहीं दिया।"

"इतनी सहजता से उत्तर देना संभव नहीं।"

लेकिन इसके बाद नलिनी साठे से बार-बार यह कहने लगी कि वह इससे शादी करले, वह उससे शादी करले पर साठे सदा उसे टालता रहा।

चित्रों की प्रतियोगिता हुई। साठे को चित्र पर सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार मिला। बम्बई की जहांगीर आर्ट गैलरी में उस दिन साठे को खूब बधाइयाँ दी और नलिनी एक माडल गर्ल के रूप में चित्रकारों की आंखों में चढ़ गयी।

उस रात साठे ने खूब पी। अपने कमरे में बैठा हुआ सोच रहा था कि पारितोषिक व चित्र की बिक्री के रूप में मिले हुए रुपयों से वह सुलोचना की शादी कर देगा जिससे वह एक महान् दायित्व से मुक्त हो जायेगा।......वह अप्रत्याशित आश्चर्य में डूब गया, कि उसे इतने नशे में भी वह दायित्वपूर्ण बात क्यों याद आई? उसे प्रतीत हुआ कि उसका अन्तर्मन गहरी चिन्ताओं से आवृत है।

और वही चिरपरिचित दरवाजे की खट्खट्! उसने अपनी आंखों को मल कर देखा—नलिनी।

"तुम!" उसके मुख से हठात् निकला।

"क्यों? आश्चर्य हो रहा है।"

"इतनी रात गये।"

अपना वचन मांगने आयी हूँ।"

"मांगो।" [redacted] उठकर नाटकीयता से हाथ लम्बा करके बोला जैसे वह ईश्वर है और भक्त को वरदान देने जा रहा है।

"मुझसे शादी कर लो।"

वह जरा नाटकीयता से बोला, "मैं तुमसे ही शादी करूंगा, केवल तुमसे।" उसने नलिनी को बिलकुल अपने सामने खड़ा कर लिया। उसने

दोनों कन्धों को पकड़कर जोर से झिंझोड़ डाला। नलिनी तनिक भयभीत हो गयी। उसके वक्ष पर अपनी गर्दन रखकर वह निरुपाय सी पड़ी रही। साठे उसके मुंह को अपनी दोनों हथेलियों के बीच लेकर बोला, "कल से तुम मिसेज साठे होगी।" उसने उसे अपनी बांहों में भर लिया। नलिनी सुख के असीम अजाने प्रवाह में बह गयी। उसकी देह साठे की गर्म सांसों में पिघलने लगी।

तूफान!

खिड़कियों के दरवाजे जोर से भड़ाभड़ कर स्वतः ही बन्द हो गये। फिर धड़ाम से खुले।

"तूफान आ रहा है।" नलिनी ने दबे स्वर में कहा। उसकी दृष्टि बाहर काले–पीले बवण्डर की ओर थी।

'आने दो।' साठे ने धीमे से उत्तर दिया।

× × ×

दूसरे दिन नलनी मिसेज साठे बन गई।

इस यकायक घोषणा से सारी मित्र मंडली चकित हो गई और उसने इसकी जरा भी तरफदारी नहीं की।

रघुनाथ सर्वटे ने मिस ज्योत्स्ना से कहा, "इसे कहते हैं दुर्भाग्य, ऐसी सड़ी हुई अनार साठे के गले में पड़ी है कि जिसका दाना–दाना झूठा है।"

तलदार ने तरस खाकर कहा, "यह साठे तो बेचारा इसके चक्कर में आ गया। इसने पहले पहले मुझ पर भी डोरे डाले थे। पर मैं इसके फंदे में कहां आने वाला हूं! समझ गया कि यह माडल गर्ल मुझे अपने रंग चढ़ाना चाहती है।"

"यह इसके साथ कितने दिन रहेगी? "सरदार बंतासिंह अपनी खुजला कर बोला, "हवा को आज तक कोई नहीं बांध पाया है।"

परोक्ष रूप से ये सभी चर्चाएं साठे के कानों में पड़ीं। वह नलिनी के प्रति एक गहरी उदासीनता से भर गया। उसे नलिनी का एक एक अंग जूठन की सड़ांध से भरा हुआ सा लगने लगा और जब उसकी गर्म फोंह तिलोत्तमा ने उस पर व्यंग कसते हुए कहा, "उस रात की बात भी अपना एक महत्व रखती है। वह नलिनी द्वारा रचा हुआ एक योजना-बद्ध षड्यन्त्र था। उसने समर्पण करके तुम्हारे नैतिक बल को गिरा दिया था। तुम्हारी उस मानवीय संवेदना को जगा दिया था जिससे तुम्हें उस नारी के प्रति न्याय करने के लिये विवश कर दिया जबकि वह उस न्याय की अधिकारिणी ही नहीं थी।"

वह अन्तर्वेदना में जल गया। उसे लगा कि नलिनी ने उसे फांस लिया है। तब उसका मन नलिनी के प्रति एक विरक्ति से भर गया।

तिलोत्तमा ने दिल्ली जाते ही उसे एक पत्र और लिखा। पत्र यूं था—

प्रिय साठे,

मैं यहां सकुशल पहुंच गयी हूँ। उस दिन जब मैं तुम्हारे घर से खाना खाकर निकली तब मुझे एक नये सत्य के दर्शन हुए कि तुम अपनी पत्नी को आत्मा से नहीं चाहते हो। वैसे तुमने मुझे सारे रास्ते यह विश्वास दिलाया कि मैं अपनी पत्नी को चाहता हूँ, मैंने सोच-समझ कर उससे विवाह किया है। लेकिन यह सब झूठ है, वंचना है। तुम अपनी पत्नी से तनिक भी सन्तुष्ट नहीं हो। यदि होते तो क्यों चोरी-चोरी शराब पीते, क्यों नलिनी से दूर रहने की चेष्टा करते जबकि आये हुए एक महीना हो हुआ है। मुझे विश्वास है कि नलिनी का विगत जीवन तुम्हें कभी सुख से नहीं रहने देगा। अंग-अंग बेचना जिसका पेशा रहा हो, वह कैसे अपनी स्वाभाविक दुर्बलताओं का परि-त्याग कर सकती है। इसकी बदनामी तुम्हारे व्यक्तित्व को नष्ट कर देगी। तुम्हारे सम्पूर्ण जीवन को अर्थहीन

बना देगी।...उस दिन खाने की मेज पर तुम चाकू को एक ऐसे खतरनाक निशाने पर लगा रहे थे जैसे तुम चाकू नलिनी के सीने में उतारना चाहते हो। आमलेट को इस बेरहमी से काट रहे थे जैसे तुम किसी पर सांघातिक प्रहार कर रहे हो। ये सब अचेतन मन में छुपी उन अपराधी वृत्तियों के प्रतीक हैं जो हमारे अन्तर के असंतोष व किसी नृशंसात्मक प्रवृत्ति का परिचय देते हैं। वास्तव में तुम शादी के तुरन्त बाद चाहने लगे हो कि नलिनी तुम्हारे जीवन से दूर चली जाय, या मैं ही उसकी हत्या कर दूं ताकि लोग मेरी खिल्ली न उड़ाए। मैं कहती हूँ तुम उससे तलाक ले लो क्योंकि उसका विगत जीवन कई धब्बों से भरा है। तुम्हारी शुभेच्छु–तिलोत्तमा।

और इस पत्र ने वास्तव में साठे को झिंझोड़ दिया।

आज साठे रात को पहलीबार नहीं आया था। प्रतीत टूट गया।

नलिनी परेशान सी चहलकदमी कर रही थी। उसे भी यह विश्वास हो गया था कि साठे उसके पास रहकर भी दूर है। परिणय बंधन में बंधकर वह विवश कैदी की तरह तड़प रहा है। आज वह आते ही उससे साफ-साफ स्पष्ट इस बारे में बातचीत करेगी।

विचारों में उलझते-उलझते उसे नींद आ गयी।

× × ×

सुबह उसकी आंख खुलीं। बाहर कोई 'काल बैल' बजा रहा था। उसने दरवाजा खोला। धोबी को देखकर वह झुंझला उठी और उसी क्षण साठे के न आने की चिन्ता ने उसे घेर लिया। उसने बड़ी अनिच्छा से धोबी को कपड़े दिये। कपड़े देने के पूर्व वह उन्हें एक डायरी में लिखती थी और उनकी सभी जेबों को सम्हालती थी। इसी सिलसिले में उसे तिलोत्तमा का वह पत्र मिल गया। धोबी के चले जाने के बाद उसने उस पत्र को पढ़ा। वह एकदम विचलित हो गयी और दुख के मारे उसकी आंसू आ गये।

'क्या साठे भी उसे एक गिरी हुई औरत समझता है !' नलिनी ने अपने आपसे प्रश्न किया, 'यदि उसके मन में जरा भी मैल होगा, सदेह होगा, उसके चरित्र की पवित्रता को लेकर पीडा होगी तो वह उससे अलग हो जायेगी।' उसकी आंसू भरी आंखों में निर्णय तैर उठा।

साठे आ गया। नलिनी ने उसके लिये तुरन्त चाय बनायी। चाय सामने रखकर [illegible] बोली, 'मैंने तिलोत्तमा का पत्र पढ़ लिया है। यदि तुम्हें तन की पवित्रता चाहिए तो तुम मुझसे खुशी-खुशी अलग हो सकते हो। मैंने कभी इस तन को रूखी की तरह नहीं बेचा है। इस सर्वंटे ने भी मुझे प्यार का वास्ता देकर ही छला है। उसने भी मुझे पत्नी बनाने का वायदा किया था। पत्नी बनने के सपने ने मुझे पतन के गड्ढे में गिरा दिया हो तो इसमें मेरा कोई कसूर नहीं। पाप तो सर्वंटे ने किया है। ये सभी तुम्हारे साथी मुझे जीवन भर माडल गर्ल के रूप में देखना चाहते हैं, मेरे कच्चे गोश्त से अपनी हविश मिटाना चाहते हैं पर मैं पत्नी बनना चाहती थी, मां बनना चाहती थी। मैंने किसी को भी तरजीह नहीं दी। सर्वंटे ने प्रेम के नाम पर छला है मुझे।' नलिनी की आंखें सजल हो गयी। गला रुद्ध हो गया, 'देह की पवित्रता पर संदेह नहीं होना चाहिये। मेरी गरीबी ने मुझे यह पेशा अपनाने को मजबूर किया, इसका तात्पर्य यह नहीं कि मैं वेश्या बन गयी हूं। मेरी यह साफ साफ बातचीत तुम्हें कोई निश्चित निर्णय लेने के लिए सहायता करेगी।'

नलिनी उठकर चली। साठे यन्त्रवत चाय पीता रहा।

लेकिन तब से एक अदृश्य अलगाव की दीवार उन दोनों के बीच खड़ी हो गई। साठे वापस शराब पीने लगा। उसे लगा कि नलिनी विश्वसनीय नहीं है। वह नारी की पवित्रता को अपनी चेतना में अधिक महत्व नहीं देता था पर भीतर ही भीतर उसको उसकी घुटन खाये जा रही थी। उसे बार-बार यह प्रतीत होता था कि वह ठगा गया है। उसे नलिनी ने हीनता के गहरे गर्त में गिरा दिया है। वह इसे लेकर अपनी उन्नति के चरम शिखर पर नहीं पहुँच सकता। ओह ! वह तबाह हो गया।

यहीं उधेड़बुन घुटन भरी खामोश रातें अलगाव की परछाइयां लेकर मंडराती थीं और दिन कार्य की व्यस्तता में बीत जाते थे। अब साठे का यह साहस न होता था कि वह नलिनी को अपने चित्रों का माडल बना ले। उसे हर क्षण यह याद आता था कि उसके अंग-प्रत्यंग में मौलिकता नहीं है, एक जूठन , विषाक्त प्रभाव है !

एक दिन दरवाजा जोर से खटखटाया गया, तब नलिनी सो रही थी और साठे चित्र बना रहा था। जब दरवाजा खोला, द्वार पर एक बुढ़िया और एक जवान लड़की खड़ी थी।

"साठे है ?"

"है।"

"उसे कहो कि उसकी मां आयी है।"

नलिनी ने लपक कर अपनी सास के पांव छू लिये। मां ने उसे आशी दी। फिर नलिनी ने अपनी ननंद को गले से लगा लिया। ननंद रो पड़ी। मां टूटी सी भीतर गयी। नलिनी ने साठे को आवाज दी। साठे भागता हुआ आया। अपनी मां और बहिन को बांहों में भरकर बोला, "शादी एकदम अचानक हुई मां। सच कहता हूं कि सुखों का अभाव मुझे खटकता रहा।"

पर सुलोचना फूट-फूट रो पड़ी।

'पगली रोती क्यों है, लो मैं तुमसे माफी मांगता हू।" साठे ने उसे हाथ जोड़ने चाहे पर मां ने उसे मना कर दिया, "इस पापिन को हाथ मत जोडो। इसने हमारे खानदान को कलंकित कर दिया है, इसने हमें कहीं का नहीं रखा है।"

"क्यों, क्या हुआ ?" साठे ने तपाक् से पूछा।

"तुम गांव नहीं आये। यह उस छोकरे के साथ गुलछर्रे···मुझे तो र्म आती है। यह···यह मां बनने वाली······।"

"माँ !" चीख पड़ा साठे, 'यह क्या कहती हो, मेरी सुलोचना ऐसा नहीं कर सकती।"

"इसके पेट में तीन माह का बच्चा है।" माँ का चेहरा घृणा से विकृत हो गया।

"अब क्या होगा ?" साठे सिर पकड़ कर बैठ गया।

नलिनी इतनी देर तक बड़ी तटस्थता से खड़ी थी। उसने साठे की ओर देखा। साठे उसके पास आया—अपराधी की तरह। उससे क्षमा याचना करते हुए बोला, 'अब क्या होगा ?"

"इसका एक ही उपाय है कि हम उस लड़के को कानून का सहारा लेकर विवाह के लिये बाध्य करेंगे।"

सुलोचना तुरन्त बीच ही में बोली, "वे तो विवाह के लिये तैयार है पर उनके पिता जी··।"

"मैं आज ही उसके पास जा रहा हूँ। किसी भी शर्त पर तुम्हारी शादी तय कर दूंगा।"

× × ×

विदा के पूर्व साठे ने नलिनी को बाँहों में भर कर कहा' 'तुम्हें मेरी बहिन [illegible] जीवन की जिम्मेदारी है। मैं तुमसे माफी माँगता हूँ।"

बाँहों के घेरे छोटे हुए। नलिनी ने देखा उसकी आँखें भर आयी हैं। उससे एक शब्द भी बोला नहीं गया। और साठे कई बार अपनी बहिन और नलिनी के चेहरों को देखता रहा, फिर उदास सा हो गया।

९

दिल का दौरा

भूतपूर्व मन्त्री श्री कानूनीलाल जी को जब कामराज योजना में हुकम की तिग्गी बता दी गयी तब उनको एकाएक दिल का दौरा पड़ गया। पूरे तीन महीने के विश्राम के बाद आज पहली बार साँझ के पाँच बजे वे अखिल भारतवर्षीय विधवाश्रम के सालाना जलसे का उद्घाटन करने जा रहे थे।

वे गाव तकिये के सहारे बैठे थे और उनके सामने जलसे के संयोजक बनवारी लाल जी विराजमान थे।

अपनी आँखों को अजब तरह से मिचमिचा कर कानूनीलाल जी ने धीमे स्वर में कहा, "वैसे डॉक्टरों ने मुझे अभी भी कम्पलीट रेस्ट के लिए कह रखा है पर आपका अनुरोध मुझसे टाला नहीं जा सकता।"

"आपसे मुझे यही उम्मीद थी।" और बनवारीलाल जी ने दीवार पर लटकती सिंह की खाल पर अपनी दृष्टि जमाते हुए कहा, "छोटे मुँह बड़ी बात होगी पर अब मुझसे कहे बिना रहा भी नहीं जाता। यह कामराज योजना सिर्फ नेहरू जी की एक षड़यन्त्र मात्र थी। नेहरूजी अपने विरोधियों को हटाना चाहते थे। आपके मन्त्रित्व में कौन सी सत्य की हत्या हुई थी ?"

"लेकिन मुझे इसका कोई गम नहीं है। मैं तो राजनीतिज्ञ कम और सामाजिक कार्यकर्त्ता अधिक हूँ। सेवा ही मेरे जीवन का लक्ष्य है मैं अब उसे और अधिक दिलचस्पी से कर पाऊंगा।"

"आपको कुर्सी से जरा भी मोह नहीं है।" बनवारी जी ने और अधिक प्रशंसात्मक स्वर में कहा, "लेकिन बात है पंडित जी जैसे महान आदमी की। उन्हें कम से कम ऐसे षड्यन्त्र नहीं रचने चाहिए।"

कानूनीलाल जी ने अपने मतभेद को बताया, "बात भी कोई संगीन नहीं थी। मैंने एक बार संसद भवन में उन्हें जरा तेज शब्दों में कह दिया कि पंडित जी आप अपने व्यक्तित्व की स्थापना के लिए देश का अहित कर रहे हैं।"...... बस इस पर उन्होंने मुझे अपने से अलग समझ लिया। ऐसे समझते हैं तो वे समझते रहें। भाई, मेरे जीवन का प्रथम लक्ष्य है– समाज सेवा, सो मैं अब खूब करूँगा।"...... अच्छा बताइए, मुझे कितने बजे आपकी सेवा में आना है।"

'ठीक सात बजे।"

'प्रचार तो खूब हो गया है न?' थोड़ा खांसते हुए कानूनी लाल जी ने मद स्वर में पूछा।

"इसकी आप चिंता न करें।" बनवारी जी उठ गये, "अच्छा नमस्ते!" वे चले गये।

सात बजे।...... हॉल में उद्घाटन समारोह था। सबसे पहले बनवारी जी ने इस जलसे का परिचय दिया, "भाइयों और बहिनों!

आज इस जलसे का आयोजन देश की विधवाओं के विकास करने और उनकी परेशानियों को मिटाने के लिए किया गया है। आज हम सब मिल कर विभिन्न प्रांतों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक स्थिति व रस्मो-रिवाजों को ध्यान में रखते हुए हमारी इन बहिनों के सुखद व सुनहरे भविष्य के बारे में सोचेंगे। इस शुभ अवसर पर सामाजिक जीवन में महान क्रांति के उन्नायक सेठ श्री कानूनीमल जी पधारे हैं और वही इस जलसे का उद्घाटन करेंगे।

जोर की तालियाँ बजीं।

खादी की शेरवानी, पायजामा और गांधी टोपी में सेठ जी का व्यक्तित्व गुलाब की तरह खिल रहा था। सबसे पहले खड़े होकर उन्होंने एक भरपूर दृष्टि उपस्थिति पर डाली और खंखारते हुए कहा, "भाइयों और बहिनों। इधर कुछ दिनों से मैं लम्बी बीमारी से पीड़ित हूँ। अब भी डॉक्टरों ने एक तरह से मुझ पर घूमने-फिरने का प्रतिबन्ध ही लगा रखा है पर आप लोगों के बीच आने से मैं अपने आपको नहीं रोक सका। आज मैं इन हजारों दुखियारी बहिनों के बीच अपने आपको पाकर धन्य समझ रहा हूँ और सोचता हूँ कि ईश्वर काश मुझे इनका थोड़ा-थोड़ा दर्द दे देता। (जोर की तालियाँ) क्योंकि मैं राजनीतिज्ञ बाद में हूं और सामाजिक कार्यकर्ता पहले।" हलकी तालियां।

सेठजी ने पानी की मांग की। तुरन्त पानी का गिलास लाया गया। दो घूंट पानी पीकर उन्होंने पुनः कहा, "हमारी ये बहिनें एक तरह से भाग्य से सतायी हुई हैं। भाग्य के साथ हमसे भी सतायी गयी हैं। मेरा मतलब साफ है कि हमने इन्हें साहस नहीं दिया। अन्धविश्वासों, समाज के दकियानूसी नियमों से मुक्त नहीं कराया। परिणाम यह निकला कि हमारी बहुत सी बहिनें पतन के गर्त में गिर गयीं और बहुत सी को अपना तन तांबे के सिक्कों से तोलना पड़ा।··· तो मेरे कहने का आशय यह है कि हमें क्रांति को लाना ही पड़ेगा, नये रास्ते बनाने ही होंगे।" सेठजी ने फिर पानी के घूंट लिये और रूमाल से अपना पसीना पोंछकर कहा, "हालांकि मैं अभी तक पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं हू फिर भी मैं युवकों से प्रार्थना करूंगा कि वे आगे बढ़ कर इन बहिनों को अपनाये। मैं इस जलसे को एक हजार एक रुपया दान देता हूँ।"

तालियों से आसमान गूंज गया। कानूनीलालजी का सीना फूल गया। उन्होंने एक बार दर्प से उपस्थिति को देखा? प्रसन्नता का तूफान उनके सीने में उठा।

अपने भाषण का समापन करते हुए उन्होंने कहा, "मुझे इस जलसे का उद्घाटन करते हुए परम हर्ष हो रहा है। लेकिन मैं आपसे इस बात की भी क्षमा चाहूँगा कि मैं अब आप लोगों के बीच नहीं रह पाऊंगा। मेरी तबीयत खराब है, डॉक्टरों ने आराम के लिए कहा है, इसलिए इस उद्घाटन के बाद मैं चला जाऊंगा, धन्यवाद ! अब मैं इस जलसे का विधिवत् उद्घाटन करता हूं।" और उन्होंने नये जीवन के प्रतीक रूप में एक २१ बत्तियों के दीपक को जलाया।

वहां से आते ही कानूनीलालजी आराम करने लगे। उनका बड़ा बेटा जिसने अभी अभी बी. ए. किया था, उनके पास आया। बोला, 'डैडी, आज आपने कमाल कर दिया। अब हमारी कालेज की यूनियन का भी आपको ही उद्घाटन करना पड़ेगा।'

उन्होंने बेरुखी से कहा, 'ठीक है ठीक ! सुमनेश ! अभी मुझे आराम करने दे।'

दूसरे दिन सेठ जेठमलजी का फोन आया। कानूनीलालजी ने रिसीवर उठा कर पूछा, 'कहिए सेठजी, कैसे याद किया ?'

'कल आपके भाषण और विचारों से मैं बहुत ही प्रभावित हुआ हूँ। क्या आप आज मुझ गरीब के यहां 'डिनर' लेंगे ?'

'आप और गरीब ? यह क्या कहते हैं सेठजी ? 'जेठमल ग्रुप' को कौन नहीं जानता ? उद्योग जगत के आप भी एक किंग हैं ?' सांस लेकर उन्होंने कहा, 'कहिए, मैं आपकी सेवा में कितने बजे हाजिर होऊं ?'

'जरा जल्दी आजायेंगे तो कुछ और बातें हो जायेंगी। इधर आप से मिलना तो हुआ ही नहीं।'

कानूनीलालजी ने 'ठीक है' कहकर रिसीवर रख दिया। आज वे बहुत ही खुश थे। क्योंकि कई बार उन्होंने जेठमलजी के साथ कोई बड़ा उद्योग करने की चेष्टा की पर काम नहीं बना। लेकिन अब वे उनके साथ कोई नई मिल खोल सकते हैं। उन्होंने मन ही मन कहा कि

खादी की शेरवानी, पायजामा और गांधी टोपी में सेठ जी का व्यक्तित्व गुलाब की तरह खिल रहा था। सबसे पहले खड़े होकर उन्होंने एक भरपूर दृष्टि उपस्थिति पर डाली और खंखारते हुए कहा, "भाइयों और बहिनों। इधर कुछ दिनों से मैं लम्बी बीमारी से पीड़ित हूं। अब भी डॉक्टरों ने एक तरह से मुझ पर घूमने-फिरने का प्रतिबन्ध ही लगा रखा है पर आप लोगों के बीच आने से मैं अपने आपको नहीं रोक सका। आज मैं इन हजारों दुखियारी बहिनों के बीच अपने आपको पाकर धन्य समझ रहा हूँ और सोचता हूँ कि ईश्वर काश मुझे इनका थोड़ा-थोड़ा दर्द दे देता। (जोर की तालियाँ) क्योंकि मैं राजनीतिज्ञ बाद में हूं और सामाजिक कार्यकर्ता पहले।" हलकी तालियां।

सेठजी ने पानी की मांग की। तुरन्त पानी का गिलास लाया गया। दो घूंट पानी पीकर उन्होंने पुनः कहा, "हमारी ये बहिनें एक तरह से भाग्य से सतायी हुई हैं। भाग्य के साथ हमसे भी सतायी गयी हैं। मेरा मतलब साफ है कि हमने इन्हें साहस नहीं दिया। अन्धविश्वासों, समाज कि दकियानूसी नियमों से मुक्त नहीं कराया। परिणाम यह निकला कि हमारी बहुत सी बहिनें पतन के गर्त में गिर गयीं और बहुत सी को अपना तन तांबे के सिक्कों से तोलना पड़ा।··· तो मेरे कहने का आशय यह है कि हमें क्रांति को लाना ही पड़ेगा, नये रास्ते बनाने ही होंगे।" सेठजी ने फिर पानी के घूंट लिये और रूमाल से अपना पसीना पोंछकर कहा, "हालांकि मैं अभी तक पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं हू फिर भी मैं युवकों से प्रार्थना करूंगा कि वे आगे बढ़ कर इन बहिनों को अपनाये। मैं इस जलसे को एक हजार एक रुपया दान देता हूँ।"

तालियों से आसमान गूंज गया। कानूनीलालजी का सीना फूल गया। उन्होंने एक बार दर्प से उपस्थिति को देखा? प्रसन्नता का तूफान उनके सीने में उठा।

बनवारी जी ने उपस्थिति को शांत किया।

अपने भाषण का समापन करते हुए उन्होंने कहा, "मुझे इस जलसे का उद्घाटन करते हुए परम हर्ष हो रहा है। लेकिन मैं आपसे इस बात की भी क्षमा चाहूँगा कि मैं अब आप लोगों के बीच नहीं रह पाऊंगा। मेरी तबीयत खराब है, डॉक्टरों ने आराम के लिए कहा है, इसलिए इस उद्घाटन के बाद मैं चला जाऊंगा, धन्यवाद ! अब मैं इस जलसे का विधिवत् उद्घाटन करता हूं।" और उन्होंने नये जीवन के प्रतीक रूप में एक २१ बत्तियों के दीपक को जलाया।

वहां से आते ही कानूनीलालजी आराम करने लगे। उनका बड़ा बेटा जिसने अभी अभी बी. ए. किया था, उनके पास आया। बोला, 'डैडी, आज आपने कमाल कर दिया। अब हमारी कालेज की यूनियन का भी आपको ही उद्घाटन करना पड़ेगा।'

उन्होंने बेरुखी से कहा, 'ठीक है ठीक ! गुडनेस ! अभी मुझे आराम करने दे।'

दूसरे दिन सेठ जेठमलजी का फोन आया। कानूनीलालजी ने रिसीवर उठा कर पूछा, 'कहिए सेठजी, कैसे याद किया ?'

'कल आपके भाषण और विचारों से मैं बहुत ही प्रभावित हुआ हूं। क्या आप आज मुझ गरीब के यहां 'डिनर' लेंगे ?'

'आप और गरीब ? यह क्या कहते हैं सेठजी ? 'जेठमल ग्रुप' को कौन नहीं जानता ? उद्योग जगत के आप भी एक किंग हैं ?' सांस लेकर उन्होंने कहा, 'कहिए, मैं आपकी सेवा में कितने बजे हाजिर होऊं ?'

'जरा जल्दी आजायेंगे तो कुछ और बातें हो जायेंगी। इधर आप से मिलना तो हुआ ही नहीं।'

कानूनीलालजी ने 'ठीक है' कहकर रिसीवर रख दिया। आज वे बहुत ही खुश थे। क्योंकि कई बार उन्होंने जेठमलजी के साथ कोई बड़ा उद्योग करने की चेष्टा की पर काम नहीं बना। लेकिन अब वे उनके साथ कोई नई मिल खोल सकते हैं। उन्होंने मन ही मन कहा

'कृपा कैसी ? यह तो आपकी दरियादिली है कि आपने मुझे याद फरमाया।'

इस तरह की औपचारिक बातचीत करते करते वे दोनों जने एक अत्यन्त सज्जित कमरे में आ गये। कमरा एकदम एयरकन्डीशन्ड था। डनलोपिलो के सोफा सेट ! रेडियो, टेप रिकार्ड, टेलीफोन और अद्भुत जापानी खिलौने।

कुर्सी की ओर संकेत करके जेठमलजी ने कहा, 'आइये विराजिये !'

'आप भी बैठिए न ?' और दोनों जने बैठ गये।

कुशल मंगल की बातचीत के बीच एक श्वेत वस्त्रों में लिपटी काले रंग की युवती ने कॉफी की ट्रे लेकर प्रवेश किया।

युवती का रंग बेशक काला था पर नाक-नक्शे उसके ही आकर्षक थे। बड़ी-बड़ी मीन जैसी आँखें और एकदम मोतियों से चमकीले सफेद दांत ! जिसके कारण लड़की आकर्षक लगती थी।

कानूनीलालजी ने एक नजर उस पर डाली और बातचीत का सिलसिला छेड़ा, 'देश की स्थिति ठीक नहीं है। मौजूदा सरकार की नीतियों से न तो पूंजीपति सन्तुष्ट है और न सर्वहारा वर्ग।......और बेचारे मध्यम वर्ग की दुर्दशा को तो आप पूछें ही नहीं ?......बेचारा घुन की तरह दो चक्की के पाटों में......क्या आप मेरी बात सुन रहे हैं ?'

1 जेठमलजी चौंक पड़े। बोले, 'हाँ-हाँ सुन रहा हूँ।'

'फिर इस नौकरानी की ओर से नजर...।'

बीच में ही जेठमलजी ने अवरोध उत्पन्न किया, 'कानूनीलाल जी, यह नौकरानी नहीं; मेरी बेटी शोभा है। दो वर्ष पहले यह विधवा हो गयी थी।'

कानूनीलालजी संकोच में पड़ गये। झेंपते हुए बोले, 'मुझे क्षमा कर दीजिएगा।'

हुआ कि अब वे मिनिस्टर नहीं हैं।

उस रात उन्होंने कई बड़ी योजनाएं बनालीं।

× × ×

सुबह, एक ताजा और नयी सुबह आयी।

आज कानूनीलालजी ने सुबह से ही सभी नेताओं व सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को मुलाकातों को कैंसिल कर दिया। अपनी डायरी में से कई योजनाएं बनायीं और उन्होंने यह भी तय किया कि वे जेठमलजी से यह भी प्रार्थना करेंगे कि अपने ग्रुप के संसद सदस्यों से कहकर थोड़ा सा पंडितजी को चमत्कार बतवायें। हो सके तो भाषा के प्रश्न पर ही वे नेहरू-नीति का ऐसा विरोध करायें कि उन्हें यह पता चल जाय कि कानूनीलाल भी कम नहीं है।

समय बहुत धीरे गुजर रहा था।

कानूनीलालजी बेचैन हो रहे थे। बार-बार दीवार पर लगी घड़ी को देख रहे थे कि खुदा जो भी करता है, अच्छा ही करता है। आज वे मिनिस्टरी में नहीं हैं लेकिन कल? फिर कौन व्यक्ति सदा अमर रहता है? इस वाक्य के साथ उनके दृष्टि-लोक में नेहरूजी की तस्वीर खिंच गयी। फिर अपने इन निम्न विचारों के प्रति उन्हें जरा आक्रोश भी आया? 'इतने महापुरुष के बारे में मुझे ऐसी गंदी और असह्य बात नहीं सोचनी चाहिए।' और वे चंद क्षणों के लिए उदास हो गये। आन्तरिक आन्दोलन ने उन्हें बहुत व्यस्त रखा।

ठीक दस बजे वे जेठमलजी की कोठी पहुँचे। आलीशान कोठी। पत्थरों की नक्काशी सामन्त कालीन हवेलियों की याद दिला रही थीं।

अनगिनत नौकर-चाकर।

पोर्च में गाड़ी के पहुँचते ही स्वयं जेठमलजी ने उनका स्वागत किया। होंठों को मुस्कान में भिगोते हुए जेठमलजी ने कहा, 'आपने जल्दी आकर मुझ पर बड़ी कृपा की।'

'कृपा कैसी ? यह तो आपकी दरियादिल्ली है कि आपने मुझे याद फरमाया।'

इस तरह की औपचारिक बातचीत करते करते वे दोनों जने एक अत्यन्त सज्जित कमरे में आ गये। कमरा एकदम एयरकंडीशन्ड था। डनलोपिलो के सोफा सेट ! रेडियो, टेप रिकार्ड, टेलीफोन और अद्भुत जापानी खिलौने।

कुर्सी की ओर संकेत करते जेठमलजी ने कहा, 'आइये विराजिये !'

'आप भी बैठिए न ?' और दोनों जने बैठ गये।

कुशल मंगल की बातचीत के बीच एक श्वेत वस्त्रों में लिपटी काले रंग की युवती ने कॉफी की ट्रे लेकर प्रवेश किया।

युवती का रंग बेशक काला था पर नाक-नक्श उसके ही आकर्षक थे। बड़ी-बड़ी मीन जैसी आँखें और एकदम मोतियों से चमकीले सफेद दांत ! जिसके कारण लड़की आकर्षक लगती थी।

कानूनीलालजी ने एक नजर उस पर डाली और बातचीत का सिलसिला छेड़ा, 'देश की स्थिति ठीक नहीं है। मौजूदा सरकार की नीतियों से न तो पूंजीपति सन्तुष्ट हैं और न सर्वहारा वर्ग।......और बेचारे मध्यम वर्ग की दुर्दशा को तो आप पूछें ही नहीं ?......बेचारा घुन की तरह दो चक्की के पाटों में......क्या आप मेरी बात सुन रहे हैं ?'

जेठमलजी चौंक पड़े। बोले, 'हां-हां सुन रहा हूँ।'

'फिर इस नौकरानी की ओर से नजर...।'

बीच में ही जेठमलजी ने अवरोध उत्पन्न किया, 'कानूनीलाल जी, यह नौकरानी नहीं; मेरी बेटी शोभा है। दो वर्ष पहले यह विधवा हो गयी थी।'

कानूनीलालजी संकोच में गड़ गये। झेंपते हुए बोले,-'मुझे क्षमा कर दीजिएगा।'

शीला मन ही मन अपमान में जलती सी जाने लगी तो कानूनी-लालजी ने उसे रोका, 'अरे बेटी, जाती कहां है ?...अपने अकल की भूल को क्षमा नहीं करेगी ?

लेकिन शीला कुछ भी नहीं बोल पायी। सिर्फ भीतर ही भीतर घुमड़ पड़ी। उसका चेहरा दुःख से ढंक गया।

कानूनीलालजी ने पुनः क्षमा मांगी, 'आप मुझे क्षमा कर दीजिए, और तुम भी बेटी।'

लेकिन शीला कॉफी बना कर चली गयी। उसके चले जाने के बाद जेठमलजी ने व्यथा भरी उच्छ्वास छोड़ कर कहा, 'आपको क्या बताऊं सेठजी, विधवा हो जाने के बाद यह अत्यन्त ही अन्तर्मुख हो गयी है। अपने जीवन को व्यर्थ समझने लगी है। मुझे भी इसके भविष्य के लिए कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था पर कल आपके भाषण ने मुझे नई रोशनी दी। मेरे पथ को प्रशस्त कर दिया।"

कानूनीलाल जी दंभ से बोले, "मैं विधवा विवाह के एकदम पक्ष में हूँ। हमें नवयुवकों को इसकी ओर प्रेरित करना चाहिए। उनमें नयी प्रेरणाएं भरनी चाहिए।"

जेठमल जी कॉफी के प्याले को इधर उधर घुमाते रहे। कानूनी-लाल जी कॉफी पीते रहे। दोनों के बीच कुछ क्षण का मौन बैठ गया।

अचानक जेठमल जी बोले, "आपका मेरी बेटी के बारे में क्या खयाल है ?"

'किस बात को लेकर ?" वे गम्भीर हो गये।

"कल आपने कहा था कि मेरे बेटे ने यदि विधवा विवाह··· ।"

अचानक किसी सांप ने कानूनीलाल जी को काट खाया हो, इस तरह वे उछल पड़े। उनकी आँखें विस्फारित हो गयीं। प्रश्नवाचक दृष्टि से जे ओर देखकर बोले, 'ठीक है, ठीक है, मुझे कोई एतराज

नहीं ? परन्तु यह सुमनेश का नितान्त निजी मामला है, मैं उससे बातचीत करके देखूंगा।"

"देखिए कानूनीलाल जी, ऐसे मुझे हजारों लड़के मिल सकते हैं, एक करोड़पति के बाप की बेटी के लिए वरों की कोई कमी नहीं है किन्तु मैं अपने बराबर का स्टेटस चाहता हूँ। गुनाह और बेलज्जत मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"मैं इस पर सोचूंगा, गम्भीरता से सोचूंगा, आप मुझ पर विश्वास रखें। यह तो मेरे आदर्श के सर्वथा अनुकूल है।"

लेकिन इसके बाद भोजन तक कानूनीलाल जी का मन उखड़ा रहा। उन्हें मन ही मन झुंझलाहट हो रही थी कि क्या जेठमल जी ने उन्हें यहाँ इस बकवास के लिए बुलाया था ?...... और वे गुस्से से भीतर ही भीतर ऐंठने लगे।

× × ×

थोड़े समय के अन्तराल के बाद कानूनीलाल जी और जेठमल जी में बहुत ही घुट-घुट कर बातचीत होने लगी। धीरे धीरे यह खबर भी फैलने लगी कि कानूनीलाल जी अपने पुत्र सुमनेश की शादी विधवा शीला से करेंगे। फिर मुहूर्त देखकर तारीख भी निश्चित कर दी गयी।

उस दिन सभी अखबारों, नेताओं व मन्त्रियों ने उनकी [illegible] सामाजिक क्रांति के लिए भूरि भूरि प्रशंसा की और उन्हें सच्चा समाज-सुधारक घोषित किया। सगाई की रस्म भी बड़ी सादगी से सम्पन्न हुई, सिर्फ एक रुपया ही कानूनीलाल जी ने लिया। दूसरे दिन पत्रों में इनकी प्रशंसा में लिखे कई लेख व सम्पादकीय छपे।

विवाह का दिन आ नजदीक आ गया।

लगभग एक सप्ताह पहले एक बड़ा विस्फोट हुआ। कानूनीलाल जी ने अपने यहाँ जेठमल जी को बुलाया। जेठमल जी तुरन्त

थे। बैठक के एकांत क्षणों में उन्होंने पूछा, "क्या बात है कानूनीलाल जी ?"

"मुझे ऐसा लग रहा है कि इस विवाह सम्बन्ध में कुछ विघ्न पड़ेगा ?'

"यह आप क्या कहते हैं ?" आश्चर्य से पूछा जेठमल जी ने ?

"मैं ठीक कह रहा हूँ। आपका बड़ा बेटा अपनी बात से मुकुर रहा है। वह हमें 'रैड एण्ड यलो मिल्स' के शेयर्स नहीं दे रहा है। मैंने आपको पहले ही कह दिया था कि इस मिल में मेरा भी ½ हिस्सा रहेगा।"

"अब आप इस जिद्द में मत पड़िए। नहीं-नहीं करते मैं आपको पांच लाख की रकम नकद देने का वायदा कर चुका हूं। एक मकान और एक कारखाना ऊपर से दूंगा। अब आप जैसे आदर्शवादी को अधिक लालच नहीं करना चाहिए।"

मैं और लोभ ? छि: मुझे कुछ नहीं चाहिए। यह सुमनेश और आपके बीच की बात है। उसने मुझे साफ-साफ कह दिया कि वह ½ हिस्सा चाहेगा ही।"

"तब आप मुझे नाजायज़ रूप से दबा रहे हैं।" कुछ नाराज होकर जेठमल जी बोले।

"मैं कुछ नहीं जानता।" उन्होंने लापरवाही से कहा। जेठमलजी को गुस्सा आ गया। उन्होंने मन ही मन कहा— "ये कैसे सुधारक हैं ?" उन्होंने घृणा से उनके मुंह पर थूकना चाहा पर अपनी भाग्यहीन बेटी का खयाल करके वे खामोश रहे। उन्हें इस तरह बुत बने देख कर कानूनीलाल जी ने तनिक व्यंग से कहा, "आप इस पर गम्भीरता से सोच लीजिए, यह मेरे बेटे का सर्वथा निजी मामला है। आप मुझे फोन कर सकते हैं ? देखिए मैं भी गुनाह बेलज्जत क्यों करूँ ? एक तो आपकी बेटी विधवा; स पर काली, सोच लीजिए ?"

वे उठकर चले गये। जेठमलजी सुन्न से बैठे रहे जैसे वे अशक्त हो गये हों ? जैसे उनके अंग-प्रत्यंग पर लकवा मार गया हो।

कमरे में सन्नाटा था और उससे भी अधिक शून्यता थी उनके मन में। उन्हें कानूनीलाल जी से घृणा हो रही थी सो हो ही रही थी साथ ही उन्हें अपने आप से भी घृणा हो रही थी। कुछ क्षणों तक वे निस्तब्ध से बैठे रहे, फिर उन्हें अपने इस कार्य से ग्लानि होने लगी। अपने आपको वे अपराधी समझने लगे जैसे उन जैसे लोग ही समाज में अस्वस्थ परम्पराओं को जन्माते हैं।

उनके आत्मशोक के मौन को भंग किया उनकी बेटी शीला ने ? वह बहुत ही उदास और खोयी हुई थी। उसकी पलकों में व्यथा दहक रही थी।

अप्रत्याशित शीला के आगमन पर जेठमल जी चौंक पड़े। उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। कुछ पूछना चाहते थे पर अन्तर्द्वन्द्व की वजह से वे कुछ कह नहीं पाये। सिर्फ देखते रहे— व्यथा बोझिल प्रश्न भरी निगाह से।

"मैंने आपकी और कानूनीलालजी की बातें सुनली हैं। मुझे आज मालूम हुआ कि मेरा वैधव्य हजारों में नहीं लाखों में बिक रहा है। कुछ अन्देशा तो मुझे पहले भी हो रहा था पर प्रामाणिक बात मेरे पल्ले नहीं पड़ रही थी। भैया को पूछा भी, पर वे टाल गये। पर आज सारा रहस्य खुल गया है।··· पिताजी ! विधवा विवाह का आदर्श उपस्थित करना है तो दौलत से नहीं, सिद्धान्तों से कीजिए।"

जेठमलजी बेटी के मुख से उपदेश की बातें सुनकर कुछ झुंझला उठे। तिक्त स्वर में बोले, "तुम्हें इन बातों में कोई दखल नहीं देना चाहिए। यह बुजुर्गों का अपना निजी मामला है, वे ही स्वयं तुम्हारे हित-अहित की चिन्ता करेंगे।"

वह बड़े शान्त मन से बैठ गयी । उसके पिता को यह महसूस हो रहा था कि कमरे में दो प्राणी बैठे हैं फिर भी खालीपन है । तब वे आंखें मूंद कर इस तरह लुढ़क गये जैसे वे एक लम्बी यात्रा से लौटे हैं ।

"मैं यह विवाह नहीं करूंगी । यह निश्चय मैं बिल्कुल सामान्य स्थिति में ले रही हूं । पिताजी ! यदि आप अपने खानदान की चली आयी परम्पराओं के विरुद्ध बगावत करके अपनी विधवा बेटी का विवाह करना चाहते हैं तो इस आदर्श और क्रांति को धन से मत दबाइये।"

'तो क्या यह विवाह नहीं होगा ? अगर यह विवाह नहीं होगा तो मेरी इज्जत धूल में मिल जायगी ।" वे नितान्त अवश हो उठे," मेरे लिए पांच-दस लाख मामूली बात है ।"

'लेकिन यह बात सिद्धान्ततः गलत है । मैं गलत बात नहीं मानूंगी ।" उसने दृढ़ता से कहा । उसके चेहरे पर ओज झलक रहा था ।

जेठमल जी चीख पड़े, "तुम मेरी बात नहीं मानोगी ?'

"नहीं पिताजी, आप इसके लिए मुझे क्षमा करें । मैं इन मूर्खों के बीच जीवित और सुखी नहीं रह सकूंगी । यदि आप अपने समाज में नया आदर्शमय आलोक फैलाना चाहते हैं तो आप मेरा विवाह ईशकुमार जी से कर दीजिए ।"

'वह जो तुम्हारा ट्यूटर है ?' जैसे जेठमल जी पर पहाड़ गिर पड़ा हो ।

"हां, वे गरीब जरूर हैं पर वैल एजूकेटेड हैं । एम० एस० सी हैं । मुझे वे इसलिए अच्छे और सम्मानीय लगते हैं कि उनके और मेरे सिद्धान्त मिलते हैं । वे आप से कुछ भीं नहीं चाहेंगे । सिविल मैरिज करना चाहते हैं ताकि दिखावा हो ही नहीं ।"

'लेकिन मेरे खानदान की इज्ज़त ?'

"इज्जत को धमक दिखाकर देकर अधिक दिन नहीं रखी जाती। आप मेरी बात मान जाइए, मैं बालिग हूं, करना हित अहित समझती हूं, मां की आज्ञा पर मैं अपने प्रेम का भी बलिदान कर देती पर अपने वैधव्य और कालेपन का सौदा मुझे किसी कीमत पर मंजूर नहीं है। आप सोच लीजिए, मैं कानूनीलाल जी को फोन करके स्थिति स्पष्ट करती हूं कि मैं यह विवाह नहीं कर सकती। मुझे यह रिश्ता मंजूर नहीं है।"

जेठमल जी उसे मना करना चाहते थे पर वे एक शब्द भी नहीं बोल पाये। उन्हें लगा कि किसी अदृश्य शक्ति ने उनके अंग-अंग को जकड़ दिया है।

शीला ने फोन उठाया। कानूनीलाल जी अपने एकान्त कक्ष में बैठे हुए करोड़पति बनने के सपने देख रहे थे। सोच रहे थे, "कोई चिन्ता नहीं कि मुझे कामराज योजना में चौदह महीने के अल्पकालीन मंत्री के पद से अपदस्थ कर दिया पर अब मैं करोड़पति बन कर कई मंत्रियों को पैदा करूंगा सारी संसद ......।" और वे प्रसन्नता की उत्तेजना में उछल से पड़े-गद्दे पर। "विधवा विवाह हो तो ऐसा!" उनकी इच्छा हुई कि वे जोर से हो, हो, हो, करके हंसें। तभी फोन की रिंग बजी। कानूनीलाल जी ने प्रसन्नता से यह सोचते हुए फोन उठाया कि जेठमल जी ने घुटने टेक दिये होंगे कि वे चौंक पड़े, "कौन? शीला —... कहो, बेटी कहो, क्या कहा? विवाह नहीं होगा। तुम मेरे बेटे से विवाह नहीं करोगी? क्या कहा, मैं सिद्धान्त नहीं, पैसा चाहता हूं। मैं निहायत ही गिरा हुआ मुबारक हूं। शादी कर रही हूं, वह भी सिविल मेरिज। किसी दूसरे लड़के से!" फोन कट गया।

कानूनीलाल जी जोर से चीखे, "हलो, हलो! जरा मेरी भी सुनो, शीला, हलो हलो — हलो ओ ऽ ऽ ... ...

नौकर ने आकर देखा तो सन्न रह गया क्योंकि कानूनीलाल जी को दुबारा दिल का दौरा पड़ गया था।

१०

शराब और नया आदमी

'आदमी की जात होती ही ऐसी है।' पन्ना ने क्रोध से जमीन पर हाथ पटकते हुए कहा।

'तू सच कहती है बहन, सरजू का बाप भी आजकल शराब पीने लगा है।' लटिया ने उसकी बात की पुष्टि की।

'यह सब संगत के फल हैं। काले के पास गोरा बैठे, रंग न बदले पर अक्ल जरूर ही बदल जाती है।'

'हाँ—बहन, इन शराबियों में बैठते-बैठते, आदमी कैसे सोना रह सकता है?'

बात बढ़ती जा रही थी अनन्त की तरह।

रात का गहरा अंधेरा घरों पर फैलता जा रहा था। उस बढ़ते अंधेरे में पन्ना और लटिया की सुख-दुख की बातें! बातें भी ऐसी जो पुरुषों के सख्त खिलाफ।

मिल के क्वार्टरों के गन्दे और तंग कमरे। जिन्दगी का घृणित रूप। आदमी की पहली सांस से लेकर आखिरी सांस की कहानी इन कमरों में घूमती रहती है।

लटिया चिन्ता में लीन हो गई। पन्ना अपने एक नाखून को दांतों से काटने लगी। दोनों अपने-अपने विचारों में इतनी खो गईं कि सरजू के आने की आहट भी नहीं सुन सकीं।

'सरजू की मां [illegible] ने झट घूंघट

लगाता और आयी, पर लटिया अनमनस्क सी ही बैठी रही जैसे वह दुख से दबी हुई हो।

'राजू कहाँ है ?' बरजू ने ऐंठते हुए पूछा।

'सो गया है।'

'खाना क्या है ?'

'दाल और रोटी।'

'बस, दाल और रोटी।' आँखें विस्फारित करके पूछा बरजू ने और बीड़ी सुलगाने लगा।

बीड़ी का कश खींच कर उसने ज्योंही छोड़ा त्योंही घुटनदार कमरा और घुटन से भर गया। बरजू की माँ ने कहा—'बीड़ी कमरे से बाहर पिया करो, राजू को इससे खाँसी आती है।'

'जाने दे, पहले तू यह बता कि माँस पकाया है या नहीं ?'

बरजू की माँ को गुस्सा आ गया। तुनक कर बोली—'माँस क्या तुम्हारे लिए कलेजी पका कर रखती। घर में तो पूरा अनाज नहीं, और तू माँस चाहता है।'

बरजू को भी जोश आ गया। अपनी मूँछों पर ताव देता हुआ वह बोला—'आजकल तू पैसा चोर कर रखती है। सोचती है, राजू बड़ा होगा, उसको पढ़ाऊँगी, लिखाऊँगी...और तो और, उसके लिए रोज़ हर रोज मिठाई-दूध मिल जाता है पर मेरे लिए...।' बरजू चुप हो गया। सोचने लगा—गुस्सा करूँगा और गुस्से में बरजू की माँ को पीट दूँगा तो कसर नहीं रहेगा लोग मुझे शराबी कहकर चलो चुपो चिढ़ाएँगे। यदि मैं आज शराब पीकर नहीं आता तो इस मूँछों के ताव पर वह जानती कि इसकी छड़ी का कुछ दाद का आना।'

उस दिन बरजू की अन्तरात्मा ने महसूस किया कि शराब ने उसको कमज़ोर कर दिया है। शराब आदमी की दुर्बलता है।

बरजू रूखी रोटी और दाल खाने लगा। बरजू की माँ [illegible]

को आंखें और दिल न जाने क्यों भर आवे ? वह कुछ कहना चाहती थी पर कह नहीं सकी ? वह सोच रही थी—'कच्चा रोटा कैसे गले के नीचे उतरेगी; उतरे भी तब, जब दाल अच्छी हो और यह दाल दाल थोड़े ही है, पानी है पानी ।' और वह भावावेश में हो गई । उसने पल्लू को संभाला और बाहर की ओर चली गई ।

थोड़ी देर बाद जब वह लौटी तो उसके हाथ में एक ठोंगा था । उस ठोंगे में नमकीन सेव थे । बरजू की ओर बिना देखे ही उसने आधे उसकी थाली में डाल दिये और सावधान होकर इस मुद्रा में बैठ गई जैसे बरजू उसकी प्रशंसा करेगा, लेकिन बरजू ने सेव देखते ही आंखें तरेरते हुए कहा—'अब यह कैसे लाई ? चोरी चोरी पैसे जमा करती है, मुझसे छिपाती है और फिर लुक छुप कर मालपुआ खाती है । चोट्टी कहीं की...।' लटिया सम्हले, इसके पहले ही बरजू ने उसके बाल पकड़ कर दो चार लात घूंसे जमा दिये ।

लटिया रोई नहीं, चीखी नहीं, प्रतिरोध भी नहीं किया । आंखें जरूर भर आई थीं और जब बरजू ने उसकी ओर देखा तब लटिया के कांपते होंठों पर मुस्कान नाच रही थी......एक अजीब सी रोदन भरी मुस्कान । उस मुस्कान को देखकर बरजू सहम सा गया । शराब का नशा उतर रहा था । आंखों में आग भरकर बोला—'बेशरम कहीं की ।'

लटिया ने कहा—'अब तो तेरा कलेजा ठंडा हो गया ? यदि अभी तक मारने से जी नहीं भरा है तो फिर पीट ले ।'

प्रश्न ऐसा था कि बरजू जड़ हो गया क्या उत्तर दे ? नारी के धैर्य व सहिष्णुता की पराकाष्ठा पर पुरुष पराजित हो जाता है । टूटते हुए कंकाल की तरह खटिया पर पड़ता हुआ बोला—'तू मुझे बहुत सताती है कभी मैं घर बार छोड़कर भाग जाऊंगा ।'

लटिया उसके मुंह पर हाथ रखती हुई प्यार से बोली—'ऐसा क्यों कहता है । मैं भागने कैसे दूंगी तुझे ? शराब के नशे में तू है, मैं तो नहीं ।'

'आज मैंने शराब...।'

'सरजू के बापू, यह शराब तुम्हारा सत्यानाश कर देगी। मैं सच कहती हूँ, किसी दिन इस शराब के कारण मुझे मरना पड़ेगा। इस शराब से मुझे बड़ी नफरत है। आदमी को कंगाल कर देती है यह शराब...। बोलो कल से शराब नहीं पीओगे न? मैं तुम से विनती करती हूँ...।'

'नहीं पीऊँगा।' जबरदस्ती अपनी आत्मा पर काबू जमाता हुआ सरजू बोला। उसकी पलकें भारी हो गई थी। उसने एक जम्हाई भी ली।

मेरी कसम खाकर कहो कि अब शराब पीऊँ तो सरजू की माँ का खून पीऊँ।' लछिया ने सरजू के दोनो हाथ अपने हाथ में ले लिए। उसकी आँखों में असीम प्यार था। सरजू उसकी असीम श्रद्धा प्यार के सम्मुख कुछ सोच नहीं सका। उसने कसम खाली।

'लो अब थोड़ा खालो, भूखे पेट न तो अच्छी तरह नींद आयेगी और न चित्त को शांति भी मिलेगी।'

'खाने की इच्छा नहीं है।' वह उदास स्वर में बोला।

'लो, मैं तुम्हें अपने हाथ से खिला रही हूँ।' कह कर लछिया ने थोड़े कौर सरजू के 'न–न' कहते मुँह में डाल ही दिए।

उसके तीसरे दिन सरजू अपनी पत्नी की गहरी आस्था को शीशे की तरह चूर–चूर करके शराब में डूब गया। खूब शराब पी उसने। शराब में धुत् वह झूमता हुआ नदी के किनारे की ओर चल पड़ा। उठती मिटती लहरें चांदनी में बहुत अच्छी लग रही थीं। वह नदी के किनारे बैठ गया। उसके बदन में आग सी जल रही थी। वह नदी में स्नान करने लगा। नदी की लहरें जोर से नाच रही थीं।

× × ×

…ने इंजेक्शन देते हुए कहा—'हालत चिन्ताजनक है, मरीज चढ़ रहा है।'

तभी एक बुड्ढा हाँफता हुआ आया और उतावली से बोला—'मेरी बेटी को भी हैजा हो गया है, डाक्टर साहब।'

'सरजू कहाँ है।' लेबर आफिसर ने पूछा।

चम्पा ने घूंघट की ओट से धीमे होते कहा—'वह शराब पीकर कहीं पड़ा होगा।'

'चम्पा बहन तू लटिया के पास रहना और इसके बच्चे को तू यहाँ से दूर ले जा। इस कमरे में रखना खतरे से खाली नहीं है। मैं अच्छे डाक्टर का प्रबन्ध करता हूँ।'

चम्पा सरजू को अपने कमरे सुला आई। लटिया तड़प रही थी। उसकी बोली बन्द हो गयी बुझते हुए अंगार की तरह उसकी दो आँखें कभी कभी खुल कर हृदय के दुख को बता जाती थीं।

लेबर आफिसर लगभग एक घण्टे के बाद लौटा। देखा चम्पा लटिया के बिस्तरे को साफ कर रही थी। एक पल के लिये वह उन पड़ोसिन के धर्म पर मोहित हो गया। वह प्रकट में बोला—चम्पा ! कैसी तबियत है लटिया की।'

'यह तो बोलती ही नहीं।'

डाक्टर ने लटिया का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा—'बस...मिस्टर दास।'

'चम्पा लटिया को नीचे ले लो।' दास ने रोदन भरे स्वर में कहा।

'लटिया मर गई।' वह एकदम चीख सी पड़ी। सारा वातावरण दुख और पीड़ामय हो गया।

× × ×

सवेरा हुआ सूरज का प्रकाश उन सड़े-गले क्वार्टरों पर गिरता हुआ नदी के ठंडे किनारे पर फैल गया। लहरों ने किरणों को आज भी

हमेशा की तरह धुआं। स्नान करने वाली औरतें भगवान् का नाम ले लेकर डुबकियां लगा रही थी। नदी के किनारे पड़े हुए एक पुरुष को ओर किसी का भी ध्यान नहीं था। धर्म दया से भिन्न था और वह पुरुष लहरों से दूर पड़ा था।

एकाएक एक पुरुष ने उस पर पानी छिड़का। वह हड़बड़ा कर उठा। देखा—नदी, नदी की लहरें और स्नान करने वालों की हलचल।

तब उसे थोड़ा थोड़ा याद आया कि कल रात वह शराब नहीं अपनी पत्नी का खून...' उसने सोचना एकदम बन्द कर दिया। वह अपनी पत्नी का खून कैसे पी सकता है? उस पत्नी का जो उसकी मार खाकर भी उसकी सेवा करती है। जो उसकी गाली सुनकर भी दुआएं देती है।

लेकिन मैंने शराब पीकर अच्छा नहीं किया। उसकी कसम को तोड़ा और अपनी आत्मा को धोखा दिया।' और वह दुख से अभिभूत हो उठा। दौड़ पड़ा घर की ओर।

भयभीत चोर की तरह वह घर के पास पहुँचा। क्वार्टरों की चहार दीवारी में जैसे ही उसने पांव रखा वैसे ही उसे महसूस हुआ कि सारे आदमी आज मर गये हैं। वह अशांत हो उठा।

तभी जैंतु लगड़ाता हुआ बाहर आया।

'जैंतू ..!' बरजू ने डरते हुए पुकारा जैंतू ने घृणा से मुंह फेर लिया।

'क्या बात है। ये सब लोग कहा चले गये।

'तेरी पत्नी को जलाने। चण्डाल! तूने उसे मार डाला।' कहकर जैंतू रो पड़ा। 'वह लक्ष्मी थी, देवी, सावित्री थी और...!'

जैंतू ने देखा—बरजू भाग' जा रहा है श्मशान की ओर। श्मशान और जलती चिता!

चिता की उठती लपटें । उपस्थिति की घृणा और क्षोभ । सरजू के आंसू । आंसू का दुख ? दुख का पारावार ।

उसने लपक कर सरजू को अपने सीने से चिपका लिया जैसे आदमी नये आदमी की सौरभ से अपने तन की सड़ांद को मिटा रहा है ताकि वह बचपन की तरह पवित्र, निष्कलंक और निर्दोष बन जाए ।

११

अपनी धरती अपना त्याग

"मैं आपका सैनिक सम्मान नहीं कर पाऊंगा।" आहत सिपाही रूपसिंह ने विगलित स्वर में कहा। उसकी आँखें भर-भर आयीं।

"तुमने मेरा जो सम्मान किया है, वह इतिहास के पृष्ठों में सोने के अक्षरों में अंकित होगा, देश और देशवासी तुम्हारे सदा कृतज्ञ रहेंगे। तुम्हारा आभार मानेंगे बहादुर!" और प्रधान मन्त्री जी ने उसे एक पैकेट थमा दिया और वे अपनी आँखों को पोंछते हुए वार्ड के बाहर चले गये क्योंकि उनसे सैनिक की दुर्दशा नहीं देखी गयी।

उनके जाते ही रूपसिंह की माँ के चेहरे के भाव अप्रत्याशित रूप से परिवर्तित हो गये। जो आँखें आंसू बहाते हुए क्षण भर भी नहीं रुकी थी उनमें एक अजेय दृढ़ता की दीप्ति चमक उठी और उनके काले होंठ एक जीवट भरी मुस्कान में डूब गये। अपने बेटे के हाथ से उपहार लेकर वह बोली, "अब मैं नहीं रोऊँगी मेरे बेटे। हमारे प्रधानमन्त्री जी के दो आँसुओं ने मेरे सारे आँसू सोख लिये हैं। मेरा सारा दर्द मिट गया है। मुझे कोई दुख नहीं होगा कि मैं एक ऐसे बेटे की एक अभागी माँ होऊँगी जो चल-फिर नहीं सकेगा।"

उसने उपहार को एक तरफ रख दिया। पश्चिमद्वार वेदूत लगे थे। उन पर युद्धपिपासु शत्रु की दुर्भेद्य सैनिक पंक्ति को क्षण भर में तोड़ने वाले और उनके दांत खट्टे करने वाले भारत के वीर बांकुरे अपना उपचार करा रहे थे।

वार्ड में धीरे-धीरे शांति छाने लगी। खामोशियों के दायरे फैलते गये। रूपसिंह जड़वत चलते पंखे को देख रहा था। देखते देखते उसकी आंखें भर आयीं और उसकी सुबकियों ने समीप बैठी मां के ध्यान को भंग कर दिया। मां चौंक पड़ी, मानों वह किसी अन्य लोक में खोयी हुई हो। कुछ विचलित स्वर में बोली— "क्या हुआ रे रूपा? तू रोता क्यों है? क्या दर्द अधिक होता है?"

"नहीं तो?"

"जरूर तू झूठ बोलता है। तेरे पांवों में अवश्य भयंकर दर्द होता होगा। मुझे दर्द की जानकारी है। एक बार मेरे पांव में एक कील चुभ गयी थी। एक छोटी सी कील! अरे बाप रे! कितना भयानक दर्द हुआ था। रात भर नींद नहीं आयी थी। तुम्हारे बापू बार-बार पूछते थे कि "कोई दवा लाऊं?" मैं कहती नहीं, कोई खास बात नहीं है। लेकिन यह दर्द! यह मरा दर्द चेहरे पर आये बिना नहीं रह सकता।" उसने स्नेह से भरा हाथ रूपसिंह के सिर पर फेरा। फिर ललाट का चुम्बन लेती हुई पुनः बोली— "तेरे तो दोनों पांव कट गये हैं। कितने डरावने घाव हैं। उफ! देखकर कलेजा मुंह को आता है। इन घावों की पीड़ा।" और मां कांप उठी। उसने अपना चेहरा हथेलियों में छुपा लिया।

मां की असीम वेदना ने रूपसिंह के क्लान्त मुख को और मलीन कर दिया। मां को सांत्वना देता हुआ वह बोला, "दुःख मुझे अपनी पीड़ा का नहीं है। रोता भी अपने लिए नहीं हूं। इस बात की भी मुझे जरा चिंता नहीं है कि मैं अब चल नहीं सकूंगा।...... तुम जानती ही हो कि यहाँ हर आने वाला यही कहता है-- रूपसिंह जी! आपने अपने देश के लिए टांगे खोयी हैं, इसलिए आप निराश न होइए। हम सब आपको कंधों पर लेकर चलेंगे।" मां मैंने दो टांगे खोकर करोड़ों टांगे पा ली हैं; पर खेताराम! सूबेदार खेताराम का मुझे दुःख है। मां ऐसा जीवट भरा दुस्साहसी इन्सान लाखों में एक मिलेगा। जिन्दगी को एक मज़ाक समझना

और भयानक खतरों में कूद जाना उसके लिए बच्चों का खेल था। मरने के पहले उसने मुझसे यह कहा था—— हमारा खानदान पीढ़ी दर पीढ़ी देश पर कुर्बान होता आया है। मैं भी कुर्बान हो जाऊँ तो तुम मेरी बहिन को कह देना कि वह रोये नहीं। मेरे बड़े भाई ने चीन के हमले के समय जब अपने प्राण न्योछावर किये थे तब हम नहीं रोये थे। उसने भी यही कहा था "जो देश और कर्तव्य के लिए मरता है, वह मरता नहीं, वह एक ऐसा जीवन पाता है जिसका अस्तित्व कण-कण मे व्याप्त हो जाता है।" और मां वह पहाड़ की चोटी पर, झाड़ियों को रौंदकर चढ़ गया। फिर उसने इतनी तेजी से हथगोले बरसाये कि दुश्मन अपना गोला-बारूद छोड़कर भाग खड़ा हुआ लेकिन अन्त मे वह मारा गया। उसने चौबीस शत्रुओं को मारा।……—— मैंने सोचा था कि मैं उसकी बहिन को उसका संदेश कहूंगा पर……………… पर………………

"तू चिंता न कर, मैं उसकी बहिन को कह आऊंगी।"

लेकिन रूपसिंह का मन युद्ध क्षेत्र की ओर उड़ चला। वो सूबेदार सुलेमान की टुकड़ी में था। अन्धकार का दुशाला ओढ़े हुए पहाड़ियाँ। दिगन्तव्यापी मौन। शत्रु पहाड़ के उस पार से कई दिन से रुक रुक कर गोलाबारी कर रहा था। उस गोलाबारी को रोकना जरूरी था।

"यह काम कौन करेगा?" सुलेमान ने पूछा।

"मैं?" रूपसिंह ने सूबेदार का अभिवादन करके कहा।

"तुम?" उसने प्रश्न किया, "क्या मैं यह काम नहीं कर सकता हूं?"

"तुम्हें लड़ाई का अनुभव कहाँ है? मेरी समझ मे तुम फौज में नये-नये ही आये हो?"

"जी सर, मैं चीन के आक्रमण के समय फौज में भर्ती हुआ था। इसके पहले एन. सी. सी. में था। यह कार्य मुझे ही सौंपा जाय। मैं शत्रु की टोह ले सकता हूँ।" उसने दृढ़ता से कहा।

'मगर तुम अभी नये हो ?' सुलेमान ने अपने शब्दों को फैलाते हुए कहा।

"यह सही है कि मैं नया हूं।" रूपसिंह ने दृढ़ता से जवाब दिया, "मुझे युद्ध की बारीकियों का ज्ञान भी आप जैसा नहीं है। पर मेरा हौसला बहुत है। दूसरे, सर ! मैं पहाड़ी रास्ते आसानी से चढ़ उतर सकता हूं। इसका मेरा बचपन से अभ्यास है। मैं पहाड़ का रहने वाला हूं।......... फिर सर, मैं इसी दिन के लिए फौज में भर्ती हुआ था। मुझे आप क्षमा करें—मैं जल्दी से जल्दी युद्ध क्षेत्र में आने के लिए बेचैन था। मैं अपने देश की रक्षा के लिए कुछ करना चाहता हूं। आप मुझे यह पोस्ट दीजिए।" वह खूब व्यग्र हो उठा।

"पता नहीं तुम मुझे क्यों मासूम से लगते हो। खैर ! अगर तुम यह जिम्मेदारी लेना ही चाहते हो तो जाओ।...... लेकिन मैं एक बात कहे देता हूं कि वहां जिन्दगी का कोई भरोसा नहीं है।"

"मैं कुछ करना चाहता हूं सर !" उसने श्रद्धाभिभूत होकर कहा ?

और फिर वह रात के अन्धकार में अपने देवता का स्मरण करके अपने एक अन्य साथी के साथ शत्रु की टोह लेने चला। उन्हें अनुमान था कि शत्रु किस ओर से गोलाबारी कर रहा है ? उनके पास एक ऑटोमेटिक गन, दो हथगोले और एक टार्च थी। दोनों दर्रे की घाटी पार कर रहे थे। रूपसिंह के साथी ने पूछा, 'क्यों रूपसिंह, इस तरह मृत्यु के मुख में जाने के लिए क्यों बेचैन हो रहे थे ? क्या तुम्हारे जीवन में कोई चार्म नही है। ऐसा मालूम होता है कि तुम्हें कोई बड़ा आघात लगा है, तुम जिन्दगी से ऊब चुके हो।"

वह धीरे से हंसा, "पीटर ! क्या ऊब होती है और क्या ऊकताहट मुझे नहीं मालूम, मैं सिर्फ इतना जानता हूं कि दुश्मन को मारना है। मुझे अपने देश के लिए कोई महत्वपूर्ण काम करना है ?"

"शायद सूबेदार जी ठीक कहते थे कि तुम एक मासूम हो। अरे! हम जहाँ जा रहे हैं, उसके लिए सैनिक-शिक्षा का बड़ा अनुभव होना चाहिए। शत्रु के मोर्चों की खबर! ओह गॉड! एक बहुत ही मुश्किल काम होता है।"

"अनुभव, अनुभव!" रूपसिंह बड़बड़ाया। "पर पीटर अनुभव का पीरियड खत्म होते होते युद्ध बन्द हो जायेगा और मैं अपने देश के लिए कुछ भी नहीं कर पाऊँगा। तुम जानते ही हो कि मूलतः युद्ध एक निहायत ही मूर्खतापूर्ण चीज है। वह आदमी और आदमियत को खत्म करके विनाश ही फैलाता है।

काफी रास्ता पार हो गया था।

पीटर ने कहा—"अब हमें अपनी बातचीत बन्द करके चलना चाहिये। अब हम शत्रु के बहुत पास हैं।

"तुम ठीक कहते हो लेकिन मुझे अपनी बात खत्म करने दो।" रूपसिंह वहीं पर रुक गया,— "यदि मैं शत्रु के इस रहस्य का पता लगाने के लिए इतनी तत्परता और प्रार्थनाएं नहीं करता तो मुझे इस सुअवसर से वंचित रहना पड़ता। क्योंकि शत्रु हिम्मतपस्त हो चुका है, और मैं लड़ाई अधिक दिन तक चलती हुई नहीं दिखायी पड़ती है।"

पीटर ने उसकी पीठ थपथपाई।

दोनों आगे बढ़ रहे थे। रास्ता ऊबड़ था, और चढ़ाई सीधी थी। पीटर ने टार्च जलायी। ऊँची चढ़ाई की ओर देखकर उसने कहा, "हमें बाईं ओर से चलना चाहिए।" दोनों बाईं ओर बढ़े। अब वे दोनों एक महत्वपूर्ण चट्टान के पास थे। वे वहाँ बैठ गये।

"शत्रु ने इस ओर मोर्चा जमा रखा है।" रूपसिंह ने कहा— "मैं इस चट्टान पर चढ़कर देखता हूँ।" तो ... चुप पीटर ... ... आवाज़ आ रही है। सुनो तो.......... देखो— शत्रु की तोपें बम टट

यहाँ आ जायेंगी ।... ... हमें आज ही हमला कर देना चाहिए । ... ... मैं ऊपर दीवार पर चढ़कर अपनी फौज को सिगनल करता हूं ।

पीटर उसे समझाता रहा पर रूपसिंह ने चट्टान पर चढ़कर टार्च से सिगनल कर दिया और तब तक सिगनल करता रहा जब तक उसे वापस सिगनल नहीं मिल गया ।

गोली की आवाज आयी । रूपसिंह नीचे उतर गया । दोनों ने ऊँची जगह पर स्थित दो घाटियों पर मोर्चा जमा लिया । अन्धाधुन्ध फायर होने लगे । शत्रु ने घाटियों में घुसने की चेष्टा की पर दोनों वीरों ने मोर्चा लगाये रखा । रण क्षेत्र में गोलियों और हथ-गोलों के धमाके हो रहे थे ।

× × ×

सुबह होते-होते हमारी फौज का वहां की दोनों चौकियों पर अधिकार हो गया । सूबेदार स्वयं पीटर और रूपसिंह की खोज कर रहा था । पीटर वीरगति को प्राप्त हो गया था और रूपसिंह एक खंदक में बेहोश पड़ा था । रूपसिंह की टांगों पर गोला पड़ा था और उसकी दोनों टांगे बेकार हो गयी थीं ।

मां ने अतीत में बैठे रूपसिंह का ध्यान भंग किया, "देख बेटा कौन आया है ?"

रूपसिंह ने देखा एक चार वर्षीय बच्ची हाथ में बिस्कुट का डिब्बा लिए हुए आ रही है । उस बच्ची ने वह बिस्कुट का डिब्बा रूपसिंह को देकर कहा, "जयहिन्द !' रूपसिंह ने भी उसे सैल्यूट किया और उस बच्ची के मासूम चेहरे को देखते हुए सोचने लगा कि कब तक पृथ्वी पर युद्ध का भय खत्म होगा । कब ये नन्हीं कलियाँ शांति के गीत निर्भय होकर गायेंगी । और उसकी आंखें एक बार फिर भर आयीं ।